दूसरा अध्याय

मार्कण्डेय के कथा साहित्य में सामाजिक जीवन

दूसरा अध्याय
मार्कण्डेय के कथा साहित्य में सामाजिक जीवन

समाज मनुष्य की पुरानी संस्थाओं में से एक है। मानव के अब तक का विकास समाज सापेक्षता में ही संभव हो पाया है, यानी व्यक्ति जीवन में समाज का स्थान अहम है। 'समाज' शब्द का प्रयोग व्यक्तियों के समूह के अर्थ में किया गया है। "समाज स्वयं एक संघ, एक संगठन एवं औपचारिक सम्बन्धों का योग है, जिसमें सहयोगी व्यक्ति परस्पर आबद्ध है।"[1] व्यक्ति को अपनी ज़रूरत और ज़िन्दगी को ज़ारी रखने के लिए समाज पर निर्भर रहना पड़ता है।

हर मनुष्य अपनी ज़िन्दगी के हेतु साधन जुटाने में क्रियारत रहता है। उसके इस कार्यकलाप के लिए समाज ही सहयोगी बनता है। जैसे उपर्युक्त बताया गया समाज का निर्माण वास्तव में व्यक्ति की सामुदायिक सहकारिता से बना हुआ है। समाज ही व्यक्ति को मानवीयता, संस्कार तथा सभ्यता प्रदान करने में सक्षम है। इससे ही उसका रिश्ता-नाता, लेन-देन, व्यापार-विनिमय, आचार-विचार, चिन्तन-मनन सम्पृक्त हैं। डॉ. नगेन्द्र के अनुसार "समाज से अभिप्राय सामुदायिक जीवन

---

1. "Society is the union it self, the organisation of the sum of formal relations in which associating, individuals are bound by them."
   E.N. Griddings. Principals Society - P. 11

की ऐसी अनवरत एवं नियामक व्यवस्था से है, जिसका निर्माण व्यक्ति पारस्परिक हित तथा सुरक्षा के निमित जाने अनजाने कर लेते हैं।"[1] व्यक्ति का तमाम जीवन व्यापार समाज से जुड़ा हुआ है।

साहित्य और समाज का गहरा सम्बन्ध है। दोनों एक सिक्के के दो पहलु है। साहित्य समाज से सामग्री लेता है और समाज साहित्य से प्रेरणा ग्रहण करता है। साहित्य सामाजिक असलियत की पड़ताल है। इससे समाज की कमजोरियों की झाँकी मिलती है और उन्हें सुधारने का संकेत भी प्राप्त होता है। समाज के प्रति साहित्यकार की संवेदना अन्य लोगों की अपेक्षा ज्यादा होता है। वह सामाजिक सुख-दुख, उत्थान-पतन तथा चारों और फैली विसंगतियों पर चिंतन-मनन करता है तथा अपने विचारों को साहित्य के जरिए अभिव्यक्ति देता है। साहित्यकार कभी भी अपने परिवेश को नकार नहीं सकता, क्योंकि वह परिवेश ही उसकी सर्जना का प्रेरक होता है। मार्कण्डेय की रचना प्रक्रिया भी ऐसी है।

उत्तरप्रदेश के बराई गाँव में पले-बढ़े मार्कण्डेय के लिए ग्रामीण जीवन देखा और भोगा हुआ यथार्थ है। इस ग्रामीण भावबोध के तहत उन्होंने अपने कथा साहित्य के केन्द्र में उत्तरप्रदेश के पूर्वांचलों को रखना ज़्यादा मुनासिब समझा। इस परिवेश के साथ गहराई तक जुडे रहने के कारण उन्होंने वहाँ के ग्रामाँचलिक जीवन के असलियत को तहों में देखा-परखा और विश्लेषित करने का प्रयास किया है। मधुरेश लिखते हैं "उनकी कहानियों को पढ़ने के बाद यह समझने में कोई

---

1. डॉ. नगेन्द्र - साहित्य का समाज शास्त्र - पृ. 6

दिक्कत नहीं होती कि ये अधिकांशतः एक ऐसे लेखक की रचनाएँ हैं जो अपने परिवेश से गहराई तक जुडा है।"[1] स्वातंत्र्योत्तर पूर्वांचलिक सामाजिक जीवन मार्कण्डेय के कथा साहित्य में सशक्त तथा कलात्मक अभिव्यक्ति पाया है।

वहाँ के सामाजिक जीवन को समझने के लिए यह ज़रूरी है कि उन तमाम एककों को देखा जाये जिनके जरिए ग्राम समुदाय का गठन होता है जिसके तहत पारिवारिक जीवन, सामाजिक संबन्ध, स्वास्थ, शिक्षा, नारी जीवन आदि पर विचार करना लाजिमी है।

2.1 आँचलिक जीवन का पारिवारिक परिवेश

परिवार को समाज की पहली ईकाई माना गया है, जो विकसित होकर विश्व समाज का रूप धारण कर लेता है। "परिवार एक ऐसी संस्था है जहाँ पर कुछ आत्मीय लोग मिल जुलकर रहा करते हैं और एक दूसरे के सहयोग से आगे बढ़ते हैं।"[2] समाज और व्यक्ति के लिए परिवार का योगदान अहम रहता है। परिवार के विचार-संस्कार और व्यवस्था प्रत्येक व्यक्ति को प्रभावित करते हैं। परिवार के सहयोग से ही व्यक्ति अपने लक्ष्य प्राप्ति कर लेता है। "परिवार एक प्रकार की पाठशाला भी है, जहाँ कोई भी व्यक्ति गुण-अवगुण सीखता है जो उसके सामाजिक जीवन और व्यवहार में दिखाई देता है। पारिवारिक जीवन का असर व्यक्ति के संपूर्ण व्यक्तित्व पर पड़ता है।"[3] मनुष्य की मूलभूत ज़रूरतों की पूर्ति परिवार द्वारा

---

1. मधुरेश - नई कहानी पुनर्विचार - पृ. 160
2. अंजली तिवारी - घर परिवार और रिश्ते - पृ. 12
3. वही - पृ. 12

संपन्न होता है। यह मानव में आत्मसंरक्षण, वंशवर्धन और जीवन सत्य को बनाए रखने का अहम साधन है।

भारतीय संस्कृति में परिवार को अहम स्थान दिया गया है। पति-पत्नी, माता-पिता-संतान, साँस-बहू, भाई-बहन, देवर-भाभी, दादा-दादी आदि अनेक संबन्धों से परिवार संपन्न है। गाँव में ज्यादातर संयुक्त परिवार होते थे। स्वातंत्र्योत्तर नई परिस्थिति और सामाजिक ज़रूरतों के तहत संस्कार और मूल्यों में बदलाव आ गया। ज्यादातर संयुक्त परिवार टूटकर एकल परिवार में तब्दील हो गये। परिवार चाहे संयुक्त हो या एकल दोनों ही स्थितियों में श्रम, संयम और परस्पर सहयोग आवश्यक होता है। परिवार से सहयोग की भावना बढ़ती है।

2.1.1 संयुक्त परिवार

संयुक्त परिवार भारतीय ग्रामांचलिक जीवन की सबसे बडी खासियत है। संयुक्त परिवार में माता-पिता, बच्चे, भाई-बहन, चाचा-चाची, भाई-भतीजे आदि एक ही घर में रहते हैं। संपत्ति पर सबका अधिकार माना जाता है। परिवार की संगठित भावना को बनाए रखने के लिए मुखिया होते हैं। यह परिवार का सबसे बुजुर्ग पुरुष होता हैं, क्योंकि भारतीय गाँव में ज्यादातर पितृ सत्तात्मक परिवार ही पाए जाते हैं।

दरअसल कभी-कभी इसके विपरीत परिवार की मुखिया सबसे बूढ़ी स्त्री होती है। मार्कण्डेय की कहानी 'रामलाल' में घर का अधिकार रामलाल की भाभी के हाथ में है। रामलाल, उसकी पत्नी सरूपा, बेटा और बहू, बडा भाई तथा भाभी

घर में रहते हैं। बेटे की शादी के बाद कुछ ही दिनों में सरूपा मर जाती है। अपने जीते जी सरूपा ने बहू को रसोई घर में घुसने नहीं दिया था। सरूपा की मौत के बाद घर का सारा काम बहू के कंधों पर आ जाता है। रामलाल की भाभी बहू को रात दिन काम में लगाए रखती है। संयुक्त परिवार में वैयक्तिक आशा और आकांक्षाओं का गला घोंट दिया जाता है। व्यक्ति घर में शान्ति बनाए रखने के लिए घुटन भरी तथा दबी हुई जिन्दगी जीने लगता है। रामलाल की बहू के साथ ऐसा ही घटित होता है। घर का सारा काम पूरा होने पर देर रात तक बहू को बडी साँस के पैर दबाने पड़ते हैं। गालियों की बौछार भी सहनी पडती है। बहू की हालत से रामलाल असंतुष्ट रहता है। संयुक्त परिवार में सभी सदस्यों के बीच आपसी सौहार्द, मेल-मिलाप और सहयोग की भावना होना ज़रूरी है वरना घर बिखरने की नौबत आ जाती है। भाभी रामलाल के खिलाफ गलतफहमी फैलाने लगी - "बहनी। बहू को कोई ऐसे आँख तरेर-तरेर कर नहीं देखता। अच्छा हो कि इनकी शादी जल्दी से कर दी जाए, वर्ना लच्छन बडे खराब है।" बात बढ़ती गई। बहू बेकसूर पीटी जाने लगी। नतीजा यह होता है कि रामलाल गाँव छोड़कर चला जाता है।

संयुक्त परिवार में एक दूसरे के बच्चों का आपसी झगडा होता है, जब इस झगडे में बडे लोग शामिल होते हैं तब समस्या गंभीर बन जाती है। इस प्रकार के झगडे घर की शांति को नष्ट कर देते हैं। 'माई' कहानी में मार्कण्डेय ने इस मुद्दे को उजागर किया है। माई का बेटा बीरु घर का सबसे शरारती बच्चा है। घर में वह सदा अपनी जिद पर अड़े रहता है। वीरु के इस बर्ताव के कारण वह घर के अन्य

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 50

सदस्यों से हमेशा दुर्लक्षित रह जाता है। "माई इसके ऊपर इस समय इसलिए बिगड़ी थी कि उसने चाची की छटी लड़की को घर में घुसते ही एक थाप लगा दी थी और लड़की का बेसुरा आलाप और उसकी माँ की तानों भरी गरमराहट-सी आवाज़ अब भी कोठे पर आ रही थी - "बहुत अच्छे लड़िका हैं तो क्या किसी को कुछ दे देंगे क्या, जब होगा कुनकियाते चलेंगे, वह भी तो अपनी माई की कोख से ही जनमी है, कोई परती-परल में से तो आयी नहीं। माई का करेजा तो एक ही है न, उन लोगों को तो कोई छू भी तो बाघ की तरह खाने दौड़ती है।"[1] ऐसे झगडे और दरार की वजह से माई का मन और शरीर दोनों ही अस्त व्यस्त हो जाता है।

संयुक्त परिवार में काम का बँटवारा अनिवार्य है। 'माई' कहानी में मार्कण्डेय ने इस तथ्य को भी बखूबी उठाया है। संयुक्त परिवार में अनेक सदस्य होते हैं तथा काम भी ज्यादा होता हैं। अगर एक ही व्यक्ति के कंधों पर सारा काम आ जाने से वह ऊब तथा थक जाता है। माई के साथ ऐसा ही घटित होता है "माई ने हाथ की मथानी, दही की कमोरी में छोड दी और अपना दीर्घ मौन तोड़ते हुए कहने लगीं, "अब देखो यही भइय; न उठूँ तो किसी को पानी न मिले। चार-चार जन हैं नीचे, लेकिन कोई उठ नहीं सकता। घर के मन्सेधू गरजते हुए आएँगे तो हमी को दोसी कहेंगे। ऊपर से इन लड़कों की झिक-झिक; सोचती हूँ कुछ दिनों के लिए कहीं चली जाऊँ।"[2]

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 253
2. वहाँ - पृ. 256

दरअसल इन सब बातों के होते हुए भी संयुक्त परिवार में रिश्तों की गर्मी को भी भलीभाँति महसूस किया जाता है। संयुक्त परिवारों में यह सुविधा रहती है कि बच्चे अपने आत्मीय जनों के बीच रहते हैं। वहाँ बच्चे को अकेलापन महसूस नहीं होता क्योंकि वहाँ उसका साथ देने के लिए परिवार के पूरे सदस्य रहते हैं। बच्चे में असुरक्षा की भावना नहीं पनपती तथा वह मानसिक रूप से स्वस्थ रहता है। 'धूल का घर' कहानी में मार्कण्डेय ने संयुक्त परिवार के सहयोग और सुखद वातावरण को यों अभिव्यक्ति दी है "राम, कक्कु और मनी, तीन भाइयों की तीन सन्तानें हैं। पर माँ राम की मर चुकी है, मनी की माँ का दूध पी कर वह बडा हुआ है और उसे कोई किसी भी तरह यह नहीं समझा सकता कि मनी की माँ उसकी माँ नहीं है। जब कभी मनी और राम में यह संघर्ष छिड़ता है कि माँ किसकी है और फैसले का भार मनी की माँ पर आ जाता है तो वह यह भी नहीं कह पाती कि नहीं बेटे, मैं तो दोनों की माँ हूँ। उनका फैसला हमेशा राम ही के पक्ष में होता है।"[1] संयुक्त परिवार में रहनेवाले बच्चों को अनेकों का लाड़-प्यार प्राप्त हो जाता है।

'उत्तराधिकार' कहानी में मार्कण्डेय ने ठाकुर जोगेशसिंह का सामंत संयुक्त परिवार की शान और विलासिता से भरी जिन्दगी का हूबहू वर्णन किया है। 'मन के मोड' कहानी संयुक्त परिवार का विघटन और भाई-भाईयों के बीच पारिवारिक ईर्ष्या को प्रस्तुत करती है। मार्कण्डेय ने अपनी रचनाओं में संयुक्त पारिवारिक जीवन व्यवस्था को बखूबी से प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। संयुक्त परिवार के

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 269

विघटन का चित्रण करते हुए उन तमाम परिस्थितियों एवं कारणों पर भी प्रकाश डाला है जो इस के विघटन के लिए उत्तरदायी है।

2.1.2 एकल परिवार

स्वातंत्र्योत्तर नई भारतीय अर्थव्यवस्था के तहत समाज का पूरा आर्थिक ढाँचा बदल गया, साथ ही दूसरी ओर नई शिक्षा से प्रभावित नवयुवक वैयक्तिक ज़रूरतों को अहमियत देने लगे। इन परिस्थितियों में संयुक्त परिवारों का विघटन अनिवार्य हो गया। दरअसल यह भी एक वजह है कि संयुक्त परिवार में अक्सर छोटी-छोटी बातों को लेकर परिवार के सदस्यों के बीच मनमुटाव होने लगता है। ऐसे मौके पर अलग रहकर संबन्धों को निभाना उचित समझा जाता है। एकल परिवार में पति-पत्नी और उनके बच्चे परिवार के सदस्य होते हैं। ऐसे परिवार में केन्द्रीय भूमिका पति-पत्नी की होती है। गृहस्थी चलाना, समस्याओं को सुलझाना तथा बच्चों का पालन पोषण दोनों की जिम्मेदारी है।

मार्कण्डेय की ज्यादातर कहानियों और उपन्यासों में एकल परिवारों की संवेदनाओं को उद्‌घाटित किया गया है। 'अग्निबीज' उपन्यास में ठाकुर ज्वाला सिंह का परिवार, साधो का परिवार तथा मुसई महतो का परिवार सभी एकल परिवार में रहते हैं। उनकी 'कल्यानमन', 'दौने की पत्तियाँ', 'दाना-भूसा', 'साबुन', 'मुंशीजी', 'धुन' तथा 'बादलों का टुकड़ा' आदि कहानियों में एकल परिवार को केंद्र में रखा गया है। 'कल्यानमन' कहानी में एकल परिवार में उत्पन्न असुरक्षा एवं अकेलापन की समस्या को उद्‌घाटित किया गया है। प्रस्तुत कहानी में मंगी और

उसका बेटा पनारु ही घर में होते हैं। स्वातंत्र्योत्तर 'सिकमी' कानून लागु होने के तहत कल्यानमन पोखरी मंगी का हो जाता है। ठाकुर उस ज़मीन को हड़पना चाहता है। इसके लिए वह अनेक चाल अपनाता है। आखिरकार ठाकुर मंगी का बेटा पनारु को उसके विरोध में बहकाता है। ऐसे मौके पर विधवा मंगी पूरी तरह से टूट जाती है। वह अकेलेपन और असुरक्षा की भावना से घिर जाती है। "उसकी दृष्टि केवल दो जगह रहती है; कभी राख से भरी, सामने रखी बोरसी पर, तो कभी सिंघाडे के छतों पर। लेकिन एक पनारु है कि उसे सुध-बुध ही नहीं। मेरे मरने पर क्या होगा। यह सब कौन देखेगा। यही एक बात उसके दिमाग को कभी कभी कीडे की तरह चालने लगती है।"[1]

'कल्याणमन' की मंगी की तरह 'सवरइया' की महाराजिन भी एकल परिवार का सदस्य है। पति की मृत्यु और बेटी की शादी के बाद महाराजिन घर में अकेली रह जाती है। ठाकुर की चाल से उसकी खेती चौपट हो जाती है। माइके से बिदाई के समय महाराजिन को सवरइया नामक एक बैल मिलता है। तमाम अभावों के बीच वह बैल की देखरेख करती हैं। पट्टीदारों की निगाहें उस बैल पर लगी हुई है। कर्ज वसूल करने के लिए पट्टीदार महाराजिन से बैल को माँगता है। माइके से लाये गये बैल को वह बेचना नहीं चाहती है। गहने महाजन के पास गिरवी रखकर पचास रुपया जुटा लेती है। आखिरकार पट्टीदार महाराजिन के पैसे की चोरी करवाता है। अकेली महाराजिन निस्सहाय रह जाती है। "रात गाँव

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 189

में एक-एक कुहराम मचा, लोग जुटे, तो देखा महाराजिन काकी विलख-विलख कर रो रही हैं.... वैजू की माई कहने लगी, "ऐसी चोरी नहीं देखी बाबा, कि घर में चोर आये, कुछ हुआ भी नहीं और रुपये लेकर चले गये।"[1] पट्टीदारों की साजिशों के परिणाम स्वरूप बैल महाराजिन से छीन लिया जाता है। महाराजिन सवरइया को खोकर जड़वत हो जाती है। एकल परिवार में अकसर ऐसा होता है कि जीवन साथी की मृत्यु और बच्चों की शादी के बाद व्यक्ति को अकेला और निसहाय जीवन बिताना पड़ता है। वे दूसरों की दखलबाजी और शोषण के शिकार बन जाते हैं।

बच्चे ज्यादातर समय खेल-कूद में व्यतीत करना पसंद करते हैं। इसके लिए साथियों की ज़रूरत होती है। एकल परिवारों में एक या दो बच्चे ही होते हैं। यदि एक ही बच्चा हो तो यह स्थिति ज्यादा कष्टदायक हो जाती है। दरअसल बच्चे सदैव अनुशासित एवं तनाव ग्रस्त माहौल में नहीं रह सकते। यदि उन पर यह थोपा जाए तो वे तनाव ग्रस्त एवं चिड़चिड़े से हो जाते हैं। मार्कण्डेय ने 'पान-फूल' कहानी में इस तथ्य को उकेरा गया है। नीली जानकी की इकलौती बेटी है। खेलने के लिए साथि नहीं होने से वह नाराज़ हो जाती है। नीली की माँ भी बच्चे की अकेलापन से दुखी है। "वह मन ही मन तनिक नाराज़ हुई और उठ कर अपनी नीली के पास चली गयीं, "तो कहाँ से गढ़ दें दूसरा बच्चा तेरे लिए? कुल ले-दे कर बडे जोग-जतन पर तू ही तो एक जनमी, वह भी इस उमिर में, और आस-पास कोई घर भी तो नहीं है। उसने बच्ची को गोद में उठाकर उसके फूल-फूले गालों

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 25

को चूम लिया और कहने लगीं, "देख, बाहर रामु होगा, उसे ले ले और बाग के पासवाली फुलवारी में घूम आ।"[1] एकल परिवार में बच्चों को अक्सर नौकर-नौकरानी तथा पालतू जानवरों के साथ खेलना तथा समय बिताना पड़ते हैं। इस प्रकार नीली की पूसी कुतिया उसकी खेलकूद की साथी है। मार्कण्डेय की रचनाओं में एकल परिवार में व्याप्त विसंगतियों तथा विद्रूपताओं का सशक्त चित्रण मिलता है।

परिवार चाहे संयुक्त हो या एकल, वह अपने आप में एक संपूर्ण संस्था है। इस संस्था में परिवार का प्रत्येक सदस्य संरक्षण एवं सहयोग प्राप्त करता है। किसी सभ्यता या संस्कृति को जिलाए रखने के लिए परिवार नाम की संस्था की अत्यधिक भूमिका है।

2.2 पारिवारिक संबन्ध

परिवार एक ही सभ्यता, संस्कृति और आचार-विचारवाले सगे सम्बन्धियों से युक्त संस्था है। हर संबन्ध का और हर व्यक्ति का अपना अलग अहमियत होता है। परिवार में छोटे से लेकर बडे तक हर किसी की भावनाओं एवं ज़रूरतों का ध्यान रखना लाजिमी है। पारिवारिक संचालन के लिए सब को साथ लेकर चलना पड़ता है। हर सदस्य के बीच एक दूसरे के प्रति अपेक्षाएँ होती हैं। यदि वे पूरित न हों तो अक्सर बिखराव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। पारिवारिक विघटन का मतलब है, पारिवारिक संबन्धों का टूट जाना। जिससे सदस्यों के बीच प्रेम और सहयोग की भावना टूट जाती है।

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 27

व्यक्तियों के व्यवहार और नकारात्मक सोच से परिवार में अक्सर टकराव उत्पन्न हो जाते हैं। इन जटिलताओं से बचने के लिए यह जरूरी है कि ऐसे समस्याओं को उत्पन्न करनेवाले कारकों पर ध्यान दिया जाए। मार्कण्डेय की पैनी निगाहों ने ऐसे तथ्यों को बखूबी उकेरा है।

2.2.1 पति-पत्नी संबन्ध

परिवार की सफलता में पति-पत्नी संबन्ध अहम भूमिका अदा करते हैं। इनके आपसी संबन्धों पर घर का माहौल एवं व्यवस्था टिकी हुई होती है। इसके लिए पति-पत्नी में आपसी तालमेल और सहजता होना ज़रूरी है। यदि पति-पत्नी आपस में संबन्धों को सही ढंग से नहीं निभा पाते तो इसका असर उनकी गृहस्थी और बच्चों की परवरिश पर पड़ता है।

मार्कण्डेय ने 'दाना-भूसा' कहानी में एक ऐसे पति-पत्नी का चित्रण किया है जो एक दूसरे को बहुत चाहते हैं। गाँव में अकाल पड़ने पर बसन के घर में खाने-पीने के लिए कुछ नहीं रह गया। बसन खुद भूखा रहकर पत्नी और बच्चों को गुड़ का शरबत पिला देता है। जब बसन की पत्नी उसको कउची कूचते देखती है तो उसका हृदय वेदना से पीडित हो जाता है। राजी पति से कहती है "दिन भर वैसे ही रह गये, अभी तक घर भी नहीं मारा। कुछ भोले भी नहीं और मुझे गट-गट रस पिला दिया। भला किस रौ-रौ नरक में मैं गिरूगी राम।"[1] बसन पत्नी को आश्वास

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 320

करने के लिए झूठ बोलता है कि "नहीं जी, यह तो वैसे ही देख रहा था कि हरी है या सूखी, 'मैंने तो सबेरे ही मुखिया के यहाँ रस दाना कर लिया था।"[1] पति-पत्नी के आत्म संबन्ध तथा प्यार का एहसास इन कथनों से स्पष्ट हो जाता है।

'सेमल के फूल' उपन्यास की नीलिमा और उसका पति दोनों परस्पर प्रेम और सहयोग से बंधे हुई हैं। एक पत्नी के नाते वह अपने कर्तव्य के साथ पूरी वफादारी करती है। उसके पति का यह कथन इस बात का प्रमाण प्रस्तुत करता है - "ऐसी औरत न तो मैंने देखी है, न देखूँगा। जबसे मेरे जीवन में आई कभी एक मिनट को भी मालूम न हुआ कि मैं उदास हूँ... रात दिन जैसे मेरी आत्मा पर उसका स्नेह छाया रहा। मेरी काया का कोई भी रोम ऐसा नहीं दिखता जिसपर उसका संस्पर्श न हो। कोई भी ऐसा काम नहीं, कोई भी ऐसी चीज नहीं जिसके पीछे उसकी छाया न हो।"[2] आगे वह कहता है - "नीलिमा.... वह तो मेरे जीवन की आराधना थी।"[3] पत्नी को वह बहुत चाहता है कि उसकी मृत्यु के बाद वह टूट जाता है।

इन सबसे अलग है 'कल्यानमन' का मंगी और बंगा का संबन्ध। मंगी पति के व्यवहार से दुखी है। बंगा एक शराबी है। वह पत्नी और बेटे के ख्याल के बिना शराब में डुबा रहता है। मंगी पति के इंतज़ार में रात देर तक बैठी रहती है। लेकिन

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 320
2. मार्कण्डेय - समल के फूल - पृ. 12
3. वही - पृ. 12

बंगा रात का दूसरे-तीसरे पहर में ही घर आता है। बच्चों की भूख, अपनी परेशानी और बंगा की नशा खोरी से उसका जीवन निराशा में डूब जाता है। पति-पत्नी के बीच का तनाव स्वस्थ गृहस्थ जीवन का घातक है। गाँवों में पति-पत्नी संबन्ध कितने भी कठिन क्यों न हो, वहाँ तलाक का प्रश्न नहीं उठता है। वे सब- कुछ सहकर जीते हैं।

'मुंशीजी' कहानी ऐसे व्यक्ति के जीवन से संबन्धित है जो अपने एयाशी में लीन रहता है। उसकी भोग-विलास में खेती-बारी बिकने लगती है। एक स्थिति ऐसी आती है जब घर में कुछ भी शेष नहीं रह जाता है। वह इतना निकम्मा है कि बीमार पत्नी की कोई चिन्ता नहीं है। बारह दिन से भूखी-प्यासी और बीमार पत्नी की परवाह नहीं करते। पड़ोसी से मिले भुट्टे वे चोरी छिपे खुद खा जाते हैं। "जब सब दाना खत्म हो गया और ठेंठी दाँत से लड़ने लगी, तो उन्हें दूसरे का ख्याल आया, बगल में देखा, औरत सो रही थी, उन्होंने दूसरा भुट्टा भी उठाया, छीला और चादर के नीचे रख कर जल्दी-जल्दी खाने लगे। भुट्टा खत्म हो गया तो चादर हटायी।"[1] पति-पत्नी संबन्धों में लापरवाही और स्वार्थ, संबन्धों में कटुता भर देती है।

'सोहगइला' की रनिया की माँ की जिन्दगी भी पति की लापरवाही से निरर्थक बन गयी है। उसे घर चलाने के लिए ठकुराईन के घर में नौकरानी बनना पड़ता है। बेटी से वह कहती है - "तेरा बाप तो ऐसा बिधरमी है कि जब तक रहा,

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 68

दारु-शराब पी कर रोज गालियाँ देता रहता और कमाई-धमाई तो दूर रही, गहन गीठों भी बेच लिया, मेरे तन का। भगवान देह में जाँगर न देते तो कब की मर-बिलाय गयी होती। दो बरिस हो गया परदेश गये, भेजा है एक छदाम कि पियरी....?"[1] पति-पत्नी के बीच का असहाय जीवन और प्यार का सम्मिश्र चित्र प्रस्तुत करने में मार्कण्डेय का कथा साहित्य सफल हुआ हैं।

2.2.2 माता-पिता और बच्चों का आपसी संबन्ध

पारिवारिक संबन्धों में माता-पिता और बच्चों का नाता अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखता है। अपने बच्चों के साथ माता-पिता का खून का रिश्ता होता है। वे अपने बच्चों के लिए सब कुछ समर्पित करते हैं। मार्कण्डेय की 'माई' कहानी माँ की अपार ममता और समर्पण की दास्तान है। माई के चार बेटे हैं, इनमें बीरु सबसे शरारती और झगडालु है। इसी कारण वह घर में सबसे उपेक्षित रहता है। बीरु जब बीमार पड़ जाता है तो घरवाले उसकी ओर ध्यान नहीं देते हैं। फिर भी माई का स्नेह बीरु के प्रति बरकरार है। जब कभी बीरु खाना पीना छोड़ देता है तब माई भूखी-प्यासी रह जाती है। "वीरु की न खानेवाली बात को ले कर माई कभी-कभी अपना और उसका उपवास इस तरह छिपाती हैं जैसे दोनों ने पेट भर खाना खा लिया है, सिर्फ इसलिए है कि लोग सुनेंगे कि बीरु खाना नहीं खा रहा है तो उसे बुरा-भला कहेंगे। माई उसे मनाती भी हैं तो इस तरह धीरे-धीरे कि कहीं कोई सुन न ले। और अपने निःशब्द आँसुओं से ही उसे समझा देना चाहती हैं कि.... दो दो

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 195

दिन खाना न खाने पर जी तोड़ कर रात दिन काम इसलिए किया करती हूँ कि कहीं कोई जान न जाए कि तुमने अभी तक नहीं खाया है।"[1] माई वीरु के बारे में हमेशा चिंतित रहती है। वह उसे स्वस्थ देखना चाहती है, जबकि घर के अन्य लोग इस में लापरवाही करते हैं। इसलिए अंत में माई कहती है - "जो पढ़ लिख लेगा, साहब-सूबा हो जाएगा उसे तो सब लोग पूछेंगे, लेकिन जो रोगी है, बुरा है, उसके लिए तो मैं ही हूँ न। ....आज से मुझसे किसी से कोई मतलब नहीं। मैं मरूँगी उसे ले कर, मैं देश देश छानूँगी उसकी दवा के लिए...."[2] इस कथन के ज़रिए माई की ममता को उद्‌घाटित किया गया है। विवेकी राय के अनुसार "इस कहानी में स्नेह लिप्त, मातृत्व समृद्ध, श्रद्धशील और पावन ग्राम माता का चित्र अंकित है।"[3]

'अग्निबीज' उपन्यास का मुराद बाकर का बेटा है। पत्नी के मरने के बाद अपने पूरे स्नेह और वात्सल्य देकर उसने मुराद को बडा किया है। "माँ मरी तो मुराद मुश्किल से छः महीने का था। अपनी लगन और बकरियों के दूध के सहारे वह उसे जिला ले गया। बीमारी में रात-रात भर उसे गोद में लिये बैठा रहता था। पेशाव-पाखाने से लेकर बहलाने-धुलाने तक सारे काम खुद करने पर भी वह मुराद पर कभी नहीं खींझा। पूरे गाँव में किसी ने कभी बाकर को मुराद पर हाथ चलाते या उसे डाँटते नहीं देखा था।"[4]

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 260
2. वही - पृ. 261
3. डॉ. राजेन्द्र कुमार - स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कथा साहित्य में ग्राम जीवन और संस्कृति - पृ. 237
4. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 24

'धूल का घर' कहानी भी माता के वात्सल्य भाव को रेखांकित करती है। राम, कक्कु और मनी तीन भाईयों की संतानें हैं। राम की माँ उसके पैदा होते ही मर जाती है। मनी की माँ उसका पालन पोषण करती है। वह राम को कभी भी ऐसा मौका नहीं देती जिससे एहसास हो कि वह उसकी सगी नहीं है। 'जब कभी मनी और राम में यह संघर्ष छिड़ता है कि माँ किसकी है और फैसले का भार मनी की माँ पर आ जाता है तो वह भी नहीं कह पाती कि नहीं बेटे, मैं तो दोनों की माँ हूँ। उनका फैसला हमेशा राम के पक्ष में होता है।"[1] मनी की माँ राम को सगे बेटे की तरह ही चाहता है। इस प्यार के नाते राम कभी भी माँ से अलग रहना नहीं चाहता है। एक दिन खेल-खेल में मनी और राम मिट्टी का एक घरौंदा बनाते हैं। मनी कहती है कि उसमें माँ को छोड सभी रहेंगे। यह सुनकर राम दिन भर नाराज़ रहता है। आखिर रात में उस घरौंदे को तोड़ देता हैं। मधुरेश के अनुसार "कहानी के अंत में राम द्वारा धूल का घर मिटाने की हरकत में भी एक सांकेतिकता विध्यमान है जो राम का मातृप्रेम तो दर्शाती ही है।"[2]

'आदमी की धुम' कहानी में बेटे के प्रति पिता का अप्रतिम प्रेम और वात्सल्य को उकेरा गया है। पिता की एक मात्र इच्छा थी कि बेटा उनकी तरह भेडों के पीछे न घूमे। पिता ने भेडों के बाल बेच कर और फिर एक-एक करके भेंडें बेचकर बेटे को पढ़ाया है। बेटे को अपने से अलग करके नई एवं प्रतिष्ठित भूमिका भी प्रदान की है। घर की गरीबी तथा अपनी रोगशय्या में भी वह बेटे को कष्ट देना

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 269
2. मधुरेश वागर्थ - मई 2005 - पृ. 75

नहीं चाहता है। "शायद माँ ने पिताजी से कभी कहा था कि मुझे एक बार बुलाना चाहिए इस पर पिताजी फिर से नाराज़ हुए थे और उन्होंने साफ साफ कहा था कि मेरे न आने से ही वे खुश थे। माँ ने बताया कि वे डरते हैं कि कहीं माँ मुझे भेड़ न बना दें....।"[1]

माता-पिता आशा करते हैं कि बच्चे उनके प्रति आदर भाव रखें तथा उनकी बातों को स्वीकार करें। दरअसल बदले हुए परिवेश में इन नाजुक संबन्धों को सँभालना और भी जटिल काम हो गया है। आज माता-पिता और बच्चों के संबन्धों की नाजुक डोर जरा सी बातों में चटक जाती है। माता-पिता और बच्चों के बीच स्नेह और सहयोग के जैसी भावनाएँ लुप्तप्राय हो गई हैं। मार्कण्डेय की 'घुरा' नामक कहानी माँ और बच्चों के बीच की दरार को उद्घाटित करती है। पति की मृत्यु के बाद घुरा अपने बेटों और बहुओं द्वारा उपेक्षित और अपमानित रहती है। यहाँ तक उसका बेटा मंगरू घूरे के साथ अमानवीय व्यवहार करता है। "वह घूरा जो रात के अँधेरे में पलंग के नीचे पैर नहीं रखती थी, सुख-सम्पत्ति पाँवों पर लोटती थी, दुख और दरिद्रता की तो बात दूर रही, बच्चों की गाली सहनी है और इस बरसात की रात में, सीलन भरे दालान में जमीन पर सो कर गुज़ार देती है।"[2] बच्चों को लेकर घूरा के सारे रंगीन सपने टूट कर बिखर जाते हैं। समय के साथ मंगरु की हालत खराब हो जाती है। बीज गोदाम का अनाज समय पर वापस नहीं

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 416
2. वही - पृ. 37

लौटने के कारण उस पर वारंट कटता है। सिपाही मगरू को पकडने आते हैं। घूरा अपने बेटे की इज्जत बचाने के लिए घर में गाढ़ कर रखी हुई तीन सौ गिन्नियाँ निकालकर देती हैं, बेटे की इज्जत बचाती है। कहानी में मार्कण्डेय ने माँ की उदार और निस्वर्थि स्नेह तथा बेटे के स्वार्थ और अमानवीयता का बखूबी चित्रण किया गया है।

2.2.3 भाई-बहन संबन्ध

पारिवारिक संबन्धों में भाई-बहन का नाता अहम है। भाई-बहन एक-दूसरे की देखभाल करते हैं। बहन अमिट स्नेह से भाई के जीवन को सँवारने में प्रयासरत रहते हैं। भाई बहन की खुशी और सुरक्षा के लिए प्रयत्न करती है। 'चाँद का टुकडा' कहानी में भाई-बहन प्यार का अनोखा चित्रण देखने को मिलता है। सनोहर बहन की शादी के वास्ते रुपया जुटाने के लिए गाँव से दूर मज़दूरी करने जाता है। वहाँ उन्हें भूखे प्यासे रहकर काम करना पड़ता है। वहाँ की त्रासद जिन्दगी के बीच उन्हें अपनी दुलहन बनी बहन का ही चेहरा याद आता है। इसके संबन्ध में जिभाऊ शामराव मोरे लिखते हैं - "मज़दूरी के लिए भूखे पेट फावड़ा चलानेवाले सनोहर नामक ग्रामीण युवक को अपनी कल्पित प्रेमिका चनरमा के बजाय दुल्हन बनी बहन और उसकी बिदाई का अभास भारतीय कुटुंब व्यवस्था में भाई-बहन के प्रेम की एक जीवंत अभिव्यक्ति हैं।"[1]

---

1. डॉ. जिभाऊ शामराव मोरे - मार्कण्डेय का कथा साहित्य और ग्रामीण सरोकार - पृ. 82

इसके विपरीत है 'घुरा' कहानी का भाई-बहन रिश्ता। पिता के मरने के बाद मंगरु बहन की शादी एक गरीब के साथ कराता है। घर की पूरी जायदाद पर मंगरु हक जमा लेता है। वह अपनी माँ घुरा पर शक करता है कि वह बेटी की मदद करेंगी। "उसके जेठे लड़के मंगरु को उसके ऊपर शक हो गया है। वह गरीब बहनोई को घर जमाई नहीं बना सकता,... घुरा दुकान में पैर नहीं रख सकती। डर है, कहीं कुछ चुरा कर दामाद को न दे दे। "बुद्धु ताला बन्द रखना। देखो, जब घूरिया घर में जाय तो नज़र रखना।"[1]

'अग्निबीच' उपन्यास में भाई-बहन प्यार का अनोखा चित्रण मिलता है। श्यामा और सुनीत दो भाईयों के बच्चे हैं। श्यामा स्वतंत्रता सेनानी साधो काका की बेटी है। सुनीत ठाकुर ज्वाला सिंह का बेटा है। पिता के जनविरोधी कार्यों को लेकर वह अंदर ही अंदर घुटता रहता है। श्यामा सुनीत को अपने सगे भाई की तरह चाहती है। उसकी देखभाल करती है। सुनीत की बिखरी मानसिकता को बदलकर वह उसे संघर्ष के लिए प्रेरित करती है।

भाई-बहन का नाता अटूट होता है। इनका रिश्ता प्रेम और सहयोग से बंधा हुआ है। दोनों के लिए एक-दूसरों का सुख प्यारा होता है।

2.2.4 बहू और ससुरालों का संबन्ध

विवाह के बाद नारी, जीवन के नये दौर में प्रवेश करती है। उसे अपनी आगे की जिन्दगी ससुरालवालों के साथ गुज़ारना है। उनके योगदान और सहयोग

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 37

से परिवार में शांति रहती है। ससुराल में बहु और सास का नाता खास महत्व रखता है। घर के सुचारु संचालन के लिए बहु और सास का सहयोग लाजिमी है। अकसर सास बहु के बीच झगड़ा होता है। सास बहु पर रोब जमाती है। हाँलाकि कुछ सासें ऐसी भी हैं वे अपनी बहु को बेटी मानती हैं। मार्कण्डेय की 'रामलाल' कहानी की सरुपा एक अच्छी सास है - "वह अपनी बहु को कभी भी रसोई में नहीं घुसने देती थी। सारे गाँव में यह खास चर्चा थी। जवान स्त्रियाँ जब एक साथ बैठतीं तो बात चलती कि जाकर देखो तो सरूपा को, वर्ना बहु आयी नहीं कि सास का क्या पूछना? शुरू कर दिया चिलम भराना, पैर में तेल लगवाना। बात-बात में मूँहजली, कलमूँही कह देना तो मामूली बात है। पर वाह रे सास, कि आज तक फरा फूल भी तोड़ने को नहीं कहा।"[1] सरुपा की मौत के बाद रामलाल की भाभी यानी बड़े सास बहु का शोषण करती है। घर का सारा काम बहु की कंधों पर आ जाता है। "रात के दूसरे पहर जब घर के सभी लोग खाना-पीना करके अपने-अपने घरों में चले जाते तो आखिर में रामलाल की बहु खाना खाती, और सारे जूठे बर्तनों को इकट्ठा करके सनहकी में डालने के लिए ले जाती।"[2] 'रामलाल' कहानी में मार्कण्डेय ने सास-बहु का संमिश्र चित्रण किया है।

ग्रामांचलों में बहु एवं ससुर के बीच में सीधा संवाद बहुत सीमित रहा करता है। काफी हद तक बहु के कार्य कलाप एवं ज़रूरतों पर ससुर का ध्यान कम जाता है। 'रामलाल' कहानी का ससुर बहु को बेहद प्यार देते हैं। उसे बेटी के

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 49
2. वही - पृ. 50

समान मानते हैं पत्नी की मौत के बाद बहु को भाभी शारीरिक एवं मानसिक शोषण करती है। रामलाल से बहु की हालत देख नहीं जाती है। वह बहु के कष्ट को देखकर दुःखी हो जाता है। "रामलाल के प्राण तड़प कर रह जाते हैं। उसके जी में आता कि जा कर कह दे, 'बहु, तु जा कर सो रहा फिर आज से घर का कुछ भी काम काज न करना।' ...उसके दिल को एक ऐसा गहरा सदमा पहूँचा कि वह प्रायः बहु की ही बात सोचा करता। उसके जी में आता, काश! वह उसे एक बार देख लेता, उससे बातें कर लेता तो उसे संतोष हो जाता।"[1]

ग्रामीण परिवार में भाभी को माँ का दर्जा दिया जाता है। देवर-भाभी रिश्ते बहुत ही पवित्र, ममतापूर्वक और आदर्श माने जाते हैं। 'मन के मोड़' कहानी की द्रौपदी अपने देवर जीतु को सगे बेटे की तरह प्यार करती है। जीतु के प्रति द्रौपदी के अत्यधिक दुलार को लेकर गाँव की कुछ औरतें तथा बच्चे जलते हैं। इसी कारण एक दिन स्कूल के चंदर आदि बच्चे जीतू को खेलने का बहाना बनाकर दूर ले जाते हैं और उसकी पिटाई करते हैं। जिससे घबरायी द्रौपदी जीतू का स्कूल जाना बंद कर देती है। "गहरी काली लकीरों से पीठ सूज गयी थी। कहीं कहीं तो छड़ी धँस गयी थी। द्रौपदी देखते ही चीख उठी। उसने आँखें बंद कर लीं और देर तक रोती रही। आस-पास की कितनी ही औरतें जुट गयीं। ...काफी समझाने-बुझाने पर द्रौपदी सँभली,.... पीठ पर हल्दी लगा कर उसे चारपाई पर सुला दिया और बिना खाये-पिये उसके सिरहाने बैठी, उसे देख कर रोती रही। इसके बाद से

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 50

जीतू का स्कल जाना बंद हो गया।"[1] "द्रौपदी भाभी के माध्यम से कहानीकार ने भारत के ग्रामीण अंचलों में स्थित उस स्त्री का जीवंत चित्र खींचा है, जो अपने देवर को बेटे की तरह प्यार करती है। इस द्रौपदी को पढ़कर सौतेलेपन की तमाम संभावनाएँ गलत साबित होती हैं।"[2]

पारिवारिक रिश्ता पवित्र होता है। एक दूसरे के प्रति प्रेम, सदभाव, संगठन, सामंजस्य और सहयोग से परिवार में सुख-समृद्धि रहती हैं, हॉलाकि आज परंपरागत संबन्ध अस्त व्यस्त हो रहे हैं। दरअसल लालच और स्वार्थ से पारिवारिक रिश्तों में दरारें पड गयी हैं। मार्कण्डेय ने अपने कथा साहित्य में पारिवारिक संबन्धों का समिश्र चित्रण प्रस्तुत किया है।

2.3 आँचलिक जीवन का सामाजिक परिवेश

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश की सामाजिक व्यवस्था में बदलाव आया। नई व्यवस्था में नए वर्गों का उदय हुआ। समाज उच्च, मध्य एवं निम्न वर्गों में बांटे हुए थे। उसमें कोई परिवर्तन नहीं आया। "स्वाधीनता और उसके बाद हुई प्रगति का लाभ पूँजीवादी वर्ग, भू-स्वामी वर्ग और कुछ अंशों में मध्यवर्ग ने ही उठाया है। उच्च वर्ग और निम्न वर्ग स्वाधीनता के बाद बने ही नहीं रहे, बल्कि उच्च वर्ग उच्च से उच्चतर होता चला गया और निम्न वर्ग निम्न से निम्नतर।"[3] अतः सामाजिक समस्याओं को वर्गगत जीवन के परिप्रेक्ष्य में समझा जाना ज़रूरी हैं।

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 142
2. जिभाऊ शामरावमोरे - मार्कण्डेय का कथासाहित्य और ग्रामीण सरोकार - पृ. 70
3. रमेश उपाध्याय - कहानी की समाजशास्त्रीय समीक्षा - पृ. 123

2.3.1 उच्च वर्ग

मार्कण्डेय ने अपने कथा साहित्य में गाँव के ठाकुर, महाजन, ज़मींदार तथा सेठ-साहुकारों के ज़रिए उच्चवर्ग का चित्रण किया है। "उच्चवर्ग से मतलब उन लगभग पाँच प्रतिशत लोगों से है जिनके अधीन औसत से ज़्यादा धन-दौलत, ऐश आराम तथा सामाजिक प्रतिष्ठा होती है। उनका धन-दौलत या तो विशाल भू-संपत्ति, उद्योग-धन्धे आदि पर स्वामित्व से या उच्च पदों पर विराजमान होने से उन्हें प्राप्त होता है।"[1] ज्यादातर उच्च वर्गीय लोग पैतृक संपत्ति के उत्तराधिकारियों के ज़रिए उच्च वर्ग में सदस्यता हासिल करते हैं।

मार्कण्डेय ने 'उत्तराधिकार' और 'मुंशीजी' कहानियों के ज़रिए भोग-विलास में डुबे उच्च वर्ग के जीवन की असलियतों का बयान किया है। उच्चवर्ग के लोग किसी पेशा या व्यवसाय में लग कर कायिक श्रम नहीं करते हैं। वे अपनी पुशतैनी जायदाद के जरिए ऐशे आराम से जीते हैं। 'मुंशीजी' कहानी का केन्द्र पात्र मुंशीजी ऐसा ही आदमी है। मुंशीजी की शादी के समय पिता ने पुत्रवधु के लिए नया घर बनाया। घर का ध्यान पिताजी को रखना पड़ता है। अठारह वर्षीय मुंशी रबर के बाबु की तरह दिनभर कभी पतंगबाजी तो कभी कबूतरबाजी में रमता है। शाम को किसी के मुर्ग पर गुलेल चलाता है। रात में शराब की बोतलें खुलतीं और औरतों के साथ मज़ा उठाता हैं। उच्च वर्ग की जिंदगी, शान शौकत में बीतती है। अपनी शान-शौकत और विलासता के प्रदर्शन में वे इस कदर खर्च करते हैं कि

---

1. डॉ. अजिताकुमारी - स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटकों में सामाजिक चेतना - पृ. 65

आगे जिन्दगी दुर्गम बन जाती है। "खर्च-बर्च की हालत भी मुंशी की अजीब थे। कहते हैं, गाँजे की चिलम कभी ठंडी ही नहीं होती थी। दूर-दूर के गाँजेड़ी, हमेशा डठे रहते। तर त्योहार पर बाप दादों से लगी हुई परम्परा का निर्वाह होता ही रहता; रुपया चाहे जहाँ से आए। धीरे-धीरे खेत-बारी बिकने लगे पर शान में कोई अंतर न आया। हालत यहाँ तक पहूँच गयी कि जब मुंशीजी के बाप मरे, तो घर में एक कौड़ी नहीं रह गयी थी।"[1] आर्थिक स्थिति में कमी हो जाने पर भी उच्च वर्ग के लोग शान और गरिमा पर गर्व करते रहेंगे। पूरे समाज को अपने वैभव से प्रभावित करके सामाजिक प्रतिष्ठा पाने की कोशिश वे करते हैं। बाप के मरने के बाद "तेरही तो धूम-धाम से होनी ही चाहिए... मुंशीजी ने अपने चारों ओर देखा, एक अंधेरा। ...अंत में सारी जगह जमीन लिख कर रुपया आया और काम किरिया बडी धूम-धाम से बीती।"[2]

धन लोलुपता उच्च वर्ग की आदत है। पूँजी इकट्ठा करने के चक्कर में वे इनसानियत खो देते हैं। मार्कण्डेय की 'धुन' कहानी उच्च वर्ग के धन लोलुपता को प्रस्तुत करती है। गाँव का जोखू महाजन बेईमानी से कमाए हुए रुपयों से अनाज का व्यापार शुरू करता है। अकाल पड़ने पर जोखू अनाज को छिपाए रखता है ताकि अनाज का भाव और ज़्यादा बढ़ जाए। धन बटोरने के धुन में जोखु अपने बीवी-बच्चों को भी पेट भर भोजन नहीं देता है। आखिर अनाज में धुन लग

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 66
2. वही - पृ. 66

जाता है। जोखु महाजन नाथु से चुपचाप सब गाड़े भाट देने को कहता है। उसे डर है कि बाहर निकालने पर गरीब घेरेंगे और सस्ता बेचना पड़ेगा। अनाज का भाव गिर जाएगा। महाजन नाथु से कहता है - "मैं तो रोज यही मनाता हूँ कि बाजार और चढ़े, भाव महँगा हो और लोक में भूखमरी फैले। मेरे भगवान इसी से खुश होता है।"[1]

उत्तराधिकार कहानी ठाकुरों की धनलोलुपता, स्त्री शोषण, विलासिता और कामुक प्रवृत्ति का पर्दाफाश करती है। ठाकुर जोगेशसिंह के रियासत की आमदनी के जरिए अनंत है। "जोगेश राव जी ने बाजारों और मवेशियों के मेलों से लाखों रुपया कमाना शुरू कर दिया था। बीज की गोदामों से लेकर, घी-दूध, मुर्गी और अंडे के नये रोजगार शुरू करा दिये थे और शहरों में बंदूक तथा मोटर की एजेन्सियाँ ले ली थीं। धूर-धूर ज़मीन के पट्टे करके उन्होंने रुपया बैंक में जमा करा दिया था और बड़े बड़े बागों को काट कर ट्रैक्टर से फर्मिंग शुरू करा दी थी। उनका दबदबा अब भी बना हुआ था। अपने जिले की कांग्रेस कमेटी को हर तरह की आर्थिक मदद देकर उन्होंने नेताओं को खरीद कर अपना दरबारी बना लिया था।"[2] आर्थिक चिंताओं से मुक्त होने से उच्चवर्ग विलासिता में डूबे रहते हैं। नारी उनके लिए भोग्या मात्र रही है। जोगेश ठाकुर के नज़र में नारी हमेशा एक मज़ाक रही है। वह करमाआजी, धुन्नीभउजी, राजोबहु, सीतामाई, निशा जैसे तमाम औरतों को अपनी वासना का शिकार बनाता है। जमींदारों की स्त्री नजरिया के संबन्ध में

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 408
2. वह - पृ. 308

कहानी के मंगल ठाकुर के बेटा सरन से कहते हैं - "तुम लोगों के लिए औरत एक सामान की तरह है, और तुम्हारे ही लिए क्यों, सड़े-गले पुराने संस्कारों की बेड़ी में कसे उन सारे कमजोर लोगों के लिए, जो चाहे मूर्ख हो, चाहे पढ़े लिखे।"[1]

'अग्निबीज' उपन्यास का ठाकुर ज्वाला सिंह स्वार्थी एवं चालाक है। उनके संबन्ध में परमानंद श्रीवास्तव लिखते हैं - "वह उस ज़मींदार वर्ग के प्रतिनिधि हैं, जिन्हें ज़मींदारी उन्मूलन कानून ने नज़रिया बदल कर बेहद लाभ पहूँचाया था। शोषण की नई विधिया, नए हथियार उनके हाथ में आ गए थे।"[2] पैसे के बलबूते पर ज्वाला सिंह सरकारी नीतियों और कानूनों के जाल में फँसाकर अवाम का शोषण करता है। उपन्यास का हरगोन सिंह निम्नवर्ग के पक्षधर हैं। उनका विश्वास है कि सभी समस्याओं की जड़ पूँजीवादी सामंती व्यवस्था है। वे पूरे सामाजिक ढाँचे को बदलने के आग्रही हैं। "ग्राम समाज की स्वायत्तता और स्वावलंबन को वापस करने के लिए पूँजीवादी अर्थव्यवस्था का परित्याग आवश्यक है, जो वर्तमान शासकों की शक्ति और सामर्थ्य से बाहर जा चुका है। अब यह कार्य सर्वहारा के व्यापक और क्रांतिकारी संगठन द्वारा ही संभव है।"[3] जब तक उच्च वर्ग का दबदबा समाज में बना रहेगा तब तक सामाजिक समस्याओं का सार्थक समाधान नहीं हो सकेगा।

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 302
2. सारिका 16 अगस्त 1981 - पृ. 71
3. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 139

2.3.2 मध्यवर्ग

मध्यवर्ग का व्यक्ति महत्वाकांक्षी होता है। आर्थिक क्षमता, सामाजिक प्रतिष्ठा, उपभोग का दर आदि में बेहतरीन जिन्दगी की कोशिश में लगे रहते हैं। मध्यवर्ग के नज़र में जीवन की सार्थकता भौतिक सुख-समृद्धि और सामाजिक प्रतिष्ठा की प्राप्ति है। दरअसल इस सोच के अंजाम से मध्य वर्ग में भ्रष्टाचार, अनैतिकता, घूसखोरी सर्वत्र व्याप्त रहती है।

मार्कण्डेय की 'दौने की पत्तियाँ' का इन्जीनियर मध्यवर्ग का आदमी है। आर्थिक क्षमता में सफलता प्राप्त करके ऊपर उठने की धुन में वह अपने पद का दुरुपयोग करता है। पंचवर्षीय योजना के तहत गाँव में नहर निर्माण शुरू होता है। काम गाँव के प्रतिष्ठित तिवारी जी के खेतों में आकर रुक जाता है। तिवारी यह नहीं चाहते कि नहर में उनके खेत चले जाए। इंजीनियर की सहायता से वे नहर को अपने खेत से मुड़वा देते हैं। "इन्जीनियर बड़ा हँसता था, क्योंकि इस नन्हें-से काम के लिए इतना बडा पँवारा खड़ा करने की क्या ज़रूरत थी? यही हजार रुपये और एक मुर्रा भैंस, जो अब दी है, तभी दे देते तो बिना लखनौ गये ही काम हो जाता। उनका तो यही काम है। जिस पार्टी ने रुपये ज्यादा दिये, उनकी ओर से फीते का रुख ज़रा सा मोड लिया। फिर नये शिकार, ताजे रुपये और इस तरह गाँव के गाँव चंदा करके अपनी हद इस खूबसूरती से बचा लेते हैं...."[1]

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 202

अगली पीढ़ी को अपने से अच्छे ओहदों पर देखने की इच्छा मध्यवर्ग में स्वतः रहता है। यह उन में अपने बच्चों को सख्त अनुशासन में रखने और उच्चतर शिक्षा दिलवाने की प्रेरणा देती है। 'साबुन' कहानी मध्यवर्गीय मानसिकता को बखूबी से उकेरा है। बटुवा पन्द्रह हजार खरच करके बेटे को शहर में पढ़ाने के लिए भेचता है। वह सुन्दर भविष्य के सपने देखने लगता है। राजेश को नौकरी नहीं मिलने पर उसके सारे सपने टूटने लगते हैं। बटुवा के लिए घर की रोजी-रोटी की व्यवस्था करना एक कठिन समस्या बन जाती है। राजेश की माँ अपने बेटे के कपडों को उसी प्रकार साफ सुथरा देखना चाहती है, जैसे बचपन में उसे पहनाकर वह देखती थी। "उसके भारी होंठ अनायास बुदबुदाने लगे, "ऐसे बदबुदार कपड़े तो कभी तुझे छूने भी न देती थी बेटे। उसगाँव-पसगाँव में यही तो कहा जाता था कि बेटा कोई रखे, तो मेरी तरह, कितनी ही बडे घरों की औरतें जलती थीं मुझसे.... कभी एक वक्त का पहना कपड़ा दूसरे दिन नहीं पहनने देती थी तुझे... और आज..."[1] आज उसके पास बेटे के कपडों को धोने के लिए साबुन की एक टिकिया भी नहीं है। मध्यवर्गीय व्यक्ति का मन भावुक और काल्पनिक ज्यादा होते हैं। घर की बिखरती आर्थिक स्थिति में भी बटुवा का सपना है कि - "सोचता हूँ मुन्ना की माँ, राजेश के लिए शहर में एक घर बनवा कर, बसा कर, तब छुट्टी लूँगा।' मध्यवर्गीय व्यक्ति का मन सदैव संघर्षपूर्ण है। वह मेहनती है लेकिन फलेच्छा से बेहद उत्कण्ठित है। इसलिए जलदी ही मोहभंग और निराशा का शिकार हो जाता है। नौकरी नहीं मिलने के कराण राजेश निराशग्रस्त हो जाता है।

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 116

वह घर से भाग जाता है। शहर जाकर वह अपने माँ-बाप को चिट्ठी भेज कर शिकायत करता है कि उन्होंने उसे उजले कपडे पहना कर क्यों 'बाबु' बना दिया था - "मैं दोष किसे दूँ। अपने को या तुम लोगों को? मुझे तुमने ऐसा बना ही दिया। आज भी जब दर-दर घूम कर नौकरी के बारे में बात करनी होती है, तो कितना बुरा लगता है, मैं क्या बताऊँ। कुछ समझ नहीं पाता। तुम जो बनाना चाहती थी मुझे, वह गलत था, माँ...। शहरों में चिकने लोगों का राज्य है।"[1] अपनी हालत से अतृप्ति और उच्च वर्ग में शरीक होने की लालसा उन्हें तनावग्रस्त बना देता है।

2.3.3 निम्नवर्ग

मार्कण्डेय की ज्यादातर कहानियाँ निम्नवर्ग के जीवन पर आधारित हैं। निम्न वर्ग उन लोगों का वर्ग होता है जो अपनी आजीविका के लिए कायिक श्रम पर निर्भर रहते हैं। खुद अभावों में पल कर उच्च और मध्य वर्ग की सेवा में इनका जीवन व्यतीत होता है। निम्न वर्ग में छोटे किसान, खेतिहर मज़दूर, श्रमिक, नौकर आदि आते हैं। गाँव में निम्न वर्ग ज़मींदार ठाकुर, महाजन आदि से शोषित रहते हैं।

भूख और गरीबी निम्नवर्ग की जिन्दगी की सबसे बडी समस्या है। 'दाना-भूसा' कहानी में बंसन का परिवार भूख की समस्या से बेहाल है। हाडतोड़ मेहनत करने के बाद भी इन लोगों को भूख मिटाने का अन्न नहीं मिलता है। इसलिए बंसन की पत्नी राजी कहती है, "साल-साल भर मरने-जरने पर भी एक महीने का दाना-

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 119

भूसा घर में नहीं आता।"[1] भूख से मारे बंसन रोटी का सपना देखता है, "वह उडता रहा और धीरे-धीरे ऐसी जगह पहूँच गया, जहाँ रोटियों का एक बहुत बडा ढ़ेर लगा हुआ था, इतना बडा कि कई बाँस की सीढ़ियाँ लगा कर भी उसके ऊपरी हिस्से को छूना मुश्किल था और लोगों की एक बहुत बडी भीड उसे मनमना लूट रही थी।"[2] निम्नवर्गों के नसीब में रोटी का सपना देखना ही लिखा है। पेट भर भोजन उन्हें मयस्सर नहीं होता। 'बादलों का टुकड़ा' कहानी की जसमा के परिवार की हालत भी इससे अलग नहीं है। बच्चे की बुरी तबीयत और भूख घर को परेशानी में ला खड़ा करता है। जसमा का पति भूख से बेहाल है "क्षण भर को उसके पाँवों में एक भार सा बँध गया क्योंकि बाहर जाने के लिए कमर के ऊपर का सारा शरीर घुमा कर भी वह अपने पाँवों को उठा नहीं पाया। पेट में एक हलकी-सी मरोड़ उठ कर गले के बीच में आ धँसी और कई तरह की रंगीन चिनगियाँ उसकी आँखों से छटक कर एक सहसा उमड़ आनेवाले अँधेरे के गुब्बार में खो गयीं। उसके जी में आया। वहीं चारपाई की पाटी थाम कर बैठ जाए।"[3] इस प्रकार भूख से तड़पते अवाम के धाव पर नमक छिडक कर महाजन अपनी निर्दयता का परिचय देता है। कहानी में महाजन का कारिंदा आकर कर्ज के बदले में जसमा की बकरी छुडा ले जाता है। बकरी के चले जाने के बाद कुपोषित बच्ची का दूध भी बंद हो जाता है।

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 319
2. वही - पृ. 320-321
3. वही - पृ. 471-472

'सहज और शुभ' नामक कहानी में मार्कण्डेय ने निम्नवर्ग की जिन्दगी के बारे में यों बयान किया है कि "असल में ये लोग बहुत गरीब थे, इसलिए अपनी ज़रूरतों के आगे शैक की बात जानते ही न थे। रुचि की चीजों में समय और शक्ति का खर्च एकदम न हो, इसके लिए ज़रूरतमन्दों ने अपने लिए कुछ नैतिक नियम बना रखे थे। मसलन वे पत्थर पर पानी चढ़ा कर अपनी विपति टल जाने की आशा कर लिया करते थे। हर दुख के लिए दैवी दवा उनके पास थी, इसलिए वे भीरु थे और कोई काम करते हुए ईश्वर द्वारा उसे देखे जाने की बात किया करते थे।"[1] गरीबी की वजह से ही जूते कहानी का बालक मनोहर अनेक चीजों से अपरिचित है। दरअसल यही कारण है कि ठाकुर की पोती के पौरों के लाल महीन जूते उसके भीतर कौतूहल को जन्म देते हैं। उसे केवल ठाकुर के चमरौधों (चमड़े का पुराना जूता) ही मालूम है। यों 'जूते' कहानी गरीबी और अभाव का अभिशाप झेलते निम्नवर्गीय बालक की आशा और आकांक्षाओं को उद्‌घाटित करती है।

'कल्यानमन' कहानी ठाकुर द्वारा शोषित निम्नवर्ग की असुरक्षित मानसिकता को उजागर करती है। कल्यानमन पोखरी मंगी की जिंदगी का एकमात्र अवलंब है। सालों से उस पोखरी पर ठाकुर की नज़र है। वह उस तालाब को हथियाना चाहता है। मंगी के बेटे पनारु को माँ के खिलाफ भड़काकर अपनी तरफ कर लेता है। ठाकुर की इस चाल के आगे मंगी टूट जाती है। नतीजा यह हुआ कि मंगी तालाब ठाकुर को देता है। इसके साथ वह गहरी पीड़ा में डूब जाती है। यहाँ विवेकी राय

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 435

के शब्द काफी समीचीन है - "जब सोने की खान सी इस पोखरी पर ज़मींदार की दृष्टि लग गई है तो क्या वह बच सकती है? भूतपूर्व ज़मींदार एक खूँखार अजदहा की भाँति जब कल्यानमन पर फन काढ़े बैठा है, तो मंगी उसके अचूक अमानवीय दंश के आगे पड़ने के लिए विवश है। मंगी जैसी कोटि-कोटि अंकिचनाओं की पोखरी जैसी जीविकाएँ ज़मींदार संज्ञा के भूतपूर्व लग जाने पर भी आशंकित बनी है।"[1] इस प्रकार 'दौने की पत्तियाँ', चाँद का टुकड़ा, 'मधुपूर के सिवान का एक कोना' आदि कहानियों में गाँव के निम्न वर्ग ज़मींदार ठाकुर तथा महाजन द्वारा शोषित रहते हैं।

मार्कण्डेय की रचनाओं में ग्रामीण जीवन का निम्नवर्गीय प्रतिनिधित्व अत्यधिक व्यापक पैमाने पर हुआ है।

मार्कण्डेय के पात्र जिस वर्ग के हैं, वे अपनी वर्गीय प्रवृत्तियों तथा वर्गीय खासियतों के साथ अपने परिचय देते हैं। ऐश और आराम से जीनेवाले उच्चवर्ग, न ऊपर और न नीचे की हालत में तड़पते मध्यवर्ग, आर्थिक अभाव, भूख और गरीबी से जकड़े निम्नवर्ग, इन तमाम लोगों को मार्कण्डेय ने यथार्थ के सजीव रेखाओं में उभारा है। "मार्कण्डेय की कहानियों के पात्र जातीय हैं। उन्होंने जिस वर्ग से अपने पात्रों को लिया है उसी वर्ग की सारी विशेषताएँ उनमें हैं। इसलिए वे अत्यंत यथार्थ एवं स्वाभाविक प्रतीत होते हैं।"[2]

---

1. डॉ. विवेकीराय - स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कथा साहित्य और ग्राम जीवन - पृ. 180
2. डॉ. सुरेश सिन्हा - नई कहानी की मूल संवेदना - पृ. 17

2.4 सामाजिक संबन्ध

समाज व्यक्तियों के विभिन्न पारस्परिक संबन्धों की व्यवस्था है। "समाज की इस व्यवस्था के अन्तर्गत समाविष्ट पारस्परिक सम्बन्ध विविध प्रकार के होते हैं। यथा - पारिवारिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक संस्तरणीय आदि और इनमें से प्रत्येक प्रकार के सम्बन्धों का क्षेत्र इस भांति काम करता है कि वह बड़ी समाज व्यवस्था के अन्तर्गत स्वतः एक व्यवस्था या उपव्यवस्था निर्मित कर लेता है। इस प्रकार समाज एक ऐसी व्यवस्था है जिसके अन्तर्गत विभिन्न कोटि के सामाजिक सम्बन्धों द्वारा निर्मित अन्तः सम्बन्धित उपव्यवस्थायें संघटित है।"[1] समाज को प्रगति की ओर ले जाने के लिए लोगों के बीच पारस्परिक संबन्ध तथा सहयोग होना ज़रूरी है।

गाँव में सामाजिक संबन्ध ज्यादातर मज़बूत होता है। 'अग्निबीज' उपन्यास में मार्कण्डेय ने गाँव के सामाजिक रिश्तों का बखान यों किया गया है "गाँव में ऐसी स्थितियाँ सारी दोस्ती-दुश्मनी से आज भी ऊपर मानी जाती हैं। किसी की लड़की की शादी हो, कोई बीमारी हो, किसी पर विपति पड़ी हो तो लोग दुश्मनी भूल कर शामिल होते हैं। ऐसे मौकों पर दुआर करने न आनेवालों को लोग नीच और कमीना मानते हैं।"[2]

गाँव में पास-पडोसवालों के बीच घनिष्ठ संबन्ध होता है। जिससे व्यक्ति अनाथ होने पर भी अकेलेपन से ग्रस्त नहीं होता है। मार्कण्डेय की कहानी 'हंसा

---

1. अक्षेन्द्र नाथ सारस्वत - सामाजिक न्याय, मानवाधिकार और पुलिस - पृ. 7
2. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 54

जाई अकेला' का हंसा घर में अकेला रहता है। वह गाँव के बाबा को बडे भाई के रूप में मानता है तथा उनकी बात को आदेश के रूप में पालन करता है। बाबा भी हंसा को अपने छोटे भाई से ज्यादा मानते हैं। एक बार रात को दूसरे गाँव में लौटते समय रतौंधग्रस्त हंसा एक स्त्री से टकरा जाता है। अपने को बचाने के लिए हंसा गिरता-पडता कांटों से उलझता हुआ किसी प्रकार गाँव आ जाता है। बाबा हंसा के शरीर में चुभे हुए कोटों को निकालते हैं और हंसा के मन की व्यथा को समझते हैं। बाबा ने कहा, "कहाँ जाऐगा ठोंकने-पकाने इतनी रात को, यहीं दो रोटी खा ले। और झरबेरियों के कांटे देखे, तो उन्हें जैसे आज पहली बार हंसा की भीतरी जिन्दगी की झाँकी दिखाई दी - इतनी खेत-बारी, ऐसा घर-दुआर। पर एक मेहरारु के बिना बिलल्ला की तरह घूमता रहता है। बाबा उठ कर हंसा की पिंडलियों से काँटे बीनने लगे।"[1] बाबा की पत्नी भी हंसा से बहुत स्नेह रखती हैं। वे हंसा को विवाहित देखना चाहती हैं। हंसा को बाबा और गाँव के अन्य व्यक्तियों तथा बच्चों का प्रेम प्राप्त है। इसलिए उसे अपने जीवन में सूनापन महसूस नहीं होता है।

स्वातंत्र्योत्तर भारत में सामाजिक रिश्तों में बदलाव आया है। इस बदलाव को मार्कण्डेय ने 'कल्यानमन' कहानी में बखूबी से दर्शाया है। मंगी पहले ठाकुर के बखरी में काम करती थी। ठाकुर के मरते ही मंगी ने वहाँ का काम छोड दिया। वह कहती है "क्या धरा है अब उस मनहूस घर में। अब न वह बात रही, न बात करनेवाला। लंबडे-लपाडियों का कोई भरोसा। कभी कुछ कह ही दें, कोई बदजबान ही निकाल दें।"[2]

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 212
2. वही - पृ. 188

'अग्निबीज' उपन्यास में मार्कण्डेय ने पूर्वी उत्तर प्रदेश के रामपुर गाँववालों का सामाजिक सहयोग, प्रगति और बदलाव के लिए लोगों को एक-जुडकर काम करने का दृश्य दिखाया है। इसके वगैर समाज अव्यवस्थित हो जाती है। उपन्यास के भाइजी, भागा बहन, साथो काका, बाकर, श्यामा, मुराद, सुनीत और सागर तथा गाँववालों के आपसी प्यार और सहयोग से 'गाँधी आश्रम' सुचारु ढंग से चलाया जाता है। इस संस्था के तहत लोगों में नए विचार, शिक्षा के प्रति लगाव आदि उत्पन्न हुए है। चन्दा बहु आश्रम के विकास कार्यों में साथ देना चाहती है। वह भाईजी को खत लिखती हैं कि "आश्रम के पीछे की सारी परती जमीन 'हरिजन बालिका पाठशाला' को दान दी जा रही है। पटवारी को कागज़ बना कर आपसे मिलने के लिए कहला रही हूँ।... हम यहाँ की जनता की सेवा में आपको हर प्रकार का सहयोग देने के लिए सदा तैयार रहेंगे।"[1] सामाजिक विकास के लिए लोगों के बीच आपसी तालमेल का होना अनिवार्य है।

2.5 शिक्षा

देश के तमाम विकास के लिए शिक्षा अनिवार्य तत्व है। स्वातंत्र्योत्तर भारत का जितना विकास होना चाहिए था उतना नहीं हुआ है। क्योंकि भारत शिक्षा के क्षेत्र में पिछड़ा हुआ है। नगर में शिक्षा का विकास हो रहा है। हाँलाकि जनसंख्या के अस्सी प्रतिशत लोग रहनेवाले गाँवों में आज भी बहुत लोग अशिक्षत रहते हैं। अज्ञान की वजह से गाँववालों का नजरिया संकीर्ण एवं संकुचित होता है। इन लोगों

---

1. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 85

के अशिक्षा का फायदा उठाकर गाँव के सेठ-साहुकार तथा ज़मींदार इन्हें लूटते रहते हैं। मार्कण्डेय के कथा साहित्य में ग्रामीण शिक्षा की बदहालतों का वास्तविक अंकन हुआ है।

गाँव में शिक्षा की सुविधा नहीं होने के कारण बच्चे स्कूल नहीं जा पाते हैं। 'अग्निबीज' में रामपुर गाँव में प्राइमरी स्कूल नहीं होने की वजह से कुछ बच्चे सेतपूर में जाते हैं। दोनों गाँवों के बीच नदी बहती है। बरसात के दिनों में बाढ़ का पानी बढ़ जाता है। नदी पर पुल नहीं होने के कारण बच्चे स्कूल नहीं जा पाते। "फिर क्या था, लड़कों के मजे के दिन आ जाते। वे मनमना नहाते और कपड़ा भीग जाने का बहाना लेकर वापस घर लौट जाते। इन दिनों स्कूल की हाज़िरी बहुत कम हो जाती।"[1] खेलते समय कुछ बच्चे अपनी किताब-कापी तक पानी में भिगो देते हैं।

गाँव में स्कूल की मूलभूत सुविधा नहीं रहती। जो इमारतें होती हैं उनका बुरा हाल होता है। 'हलयोग' कहानी गाँव के स्कूलों का पिछडेपन का पर्दाफाश करती है। "स्कूल के बच्चे.... जमीन पर बैठे थे और अपनी पटरियों को जाँघों में फँसाकर खड़िया मिट्टी से कुछ लिख रहे थे।"[2] मास्टर चौथीराम स्कूल की बुरी हालत के बारे में बाबा से शिकायत करता है - "एक फटा-पुराना टाट मुझे बच्चों के लिए मिला था। उस पर चार बच्चे भी नहीं अट पाते थे।"[3]

---

1. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 16
2. मार्कण्डेय - हलयोग - पृ. 14
3. वही - पृ. 15

गाँवों में संपन्न वर्ग के लोग ही अपने बच्चों को शिक्षा दिलाने में समर्थ होते हैं। गरीबी की वजह से अवाम बच्चों की पढ़ाई की ओर उदासीन रहते हैं। दलित मज़दूरों के बच्चे स्कूल नहीं जा पाते, क्योंकि "हाथ-पाँव संभालने के बाद से ही इन गरीब लोगों के बच्चे किसी-न-किसी ऐसे काम में लग जाते थे, जिससे परिवार की उदर पूर्ति में कुछ सहायता मिले। और नहीं तो कम से कम अपने ही लिए दो रोटी पा जाना, उनके लिए अच्छी शुरुआत मानी जाती थी। वे किसी ज़मींदार के घर गोबर उठाने, जानवर चराने अथवा घर के छोटे-मोटे कामों के लिए सिर्फ दो रोटियों पर रख लिये जाते....।"[1] गरीबी के कारण बच्चों के शिक्षा दिलाने के बजाय काम करने के लिए भेज देते हैं।

स्वातंत्र्योत्तर भारत सरकार ने शिक्षा के क्षेत्र में पिछडी जाति के लिए अनेक सुविधाएँ प्रदान की हैं। पिछडे जाति शिक्षा के खर्च उठाने में असमर्थ रहते हैं। सरकार की आर्थिक सहायता भी कर्मचारियों की वजह से उनके हाथ में ठीक तरह से नहीं पहूँचती है। 'बीच के लोग' कहानी में मार्कण्डेय ने इस मुद्दे को उठाया है। बुझावन अपने बेटा मनरा को उच्च शिक्षा के लिए कॉलेज भेजता है। लेकिन शिक्षा का खर्च उनके सामने सबसे बडी समस्या रहा है। सरकारी आर्थिक सहायता के सम्बन्ध में बुझावन फउदी दादा से कहता है कि - "का मिला दादा, आधा तो कलेज फण्ड में कट गया। बडी अन्धेर-गर्दी है। कहने को सरकार अछूतों को सहायता करती है लेकिन वह सहायता तब आती है जब दर-दर की ठोकर खा कर,

---

1. मार्कण्डेय - हलयोग - पृ. 104

चवनियाँ सूद पर पैसा लेकर किताब-कापी सब कर दो और आती भी है तो आधा तीहा होकर बेमतलब हो जाती है।"[1]

गाँव में आज भी नारी शिक्षा को बुरा और बेमतलब की बात समझा जाता है। 'अग्निबीज' उपन्यास में गोपी काकी श्यामा की पढ़ाई को रोकना चाहती है। वह बोलती है "क रे बहु, साधो की समवा भी तो उसी के साथ पढ़ती है। अकल मारी गयी है साधो की। कितनी बार समझाती हूँ कि शादी बियाह करके छुट्टी पाओ, मुदा पढ़ाय रहा है। ....कहो, बहु इतने उन्हारे-धुन्हारे सयानी लड़की को छोडना अनरथ है कि ना?"[2] उच्च वर्ग की लड़कियाँ स्कूल जा पाती थीं। बल्कि हरिजन लड़कियों का स्कूल जाना हिमालय लाँघने के समान है। "छबिया हमीशा कहती थी, 'बहिन जी, जिस दिन हम लोग पढ़ने लगेंगे', उस दिन जानो गंगा में जौ बो दिया गया है।"[3] मार्कण्डेय के कथा साहित्य में ग्रामीण शिक्षा व्यवस्था का असली चित्रण प्राप्त होता है।

2.6 स्वास्थ्य

भारतीय ग्रामीण लोग अज्ञानी और अंधविश्वासी होने से बीमारियों को 'देवी कोप' मानते हैं। 'नीम की टहनी' में मार्कण्डेय ने इसका बखान किया है। कुमार और पियरी के गाँववाले पूजा में विश्वास रखता है। बीमार पड़ने पर वे डाक्टरी इलाज करने के बजाय पूजा को अहमियत देते हैं। गाँव में एक बार चेचक

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 480
2. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 22
3. वही - पृ. 104

की महामारी फैल जाती है तब गाँववाले पूजा से ही छुटकारा पाने की आशा करते हैं। "बडा अनरथ हो रहा है भाई! रामजस की मेहरारु को भी बडा तेज़ बुखार है। तीनों बच्चे बेहोश पडे हैं। अब क्या होगा भला? माली भी तो लगा लिया था, बेचारे ने - पूजा-आरजा करायी, लेकिन बच्चों ने अभी तक आँखें न खोलीं!"[1]

गाँव में अवाम गरीबी और भूख से कुपोषण के शिकार हैं। उनका स्वस्थ दिन-ब-दिन गिरती जाती है। वे कुपोषण से मौत की लड़ाई लड़ रहे हैं। 'बादलों का टुकड़ा' में जसमा की बच्ची की हालत भी इससे अलग नहीं है। घर में बीमार बच्चा जिन्दगी और मौत की लड़ाई लड़ रहा है। "कुनाई एक खाट पर नंग-धिड्ड, चित लेटा था। उसका फूला पेट और उसकी उभरी हुई नीली नसें ही सबसे पहले उसे दिखायी पडी क्योंकि उसका सिर पेट के अनुपात में बहुत छोटा था। उसे देख कर कुनाई अपनी निरन्तर रोनेवाली एक पतली और रेंगती हुई आवाज़ में रोने लगा।"[2]

अज्ञान और अंधविश्वास तथा भूख और गरीबी से गाँव में बीमारियाँ बढ़ती रहती है और गाँव तबाह हो जाते हैं।

2.7 नारी जीवन की संवेदना एवं प्रतिरोध

भारतीय समाज में वैदिक युग को छोड़कर हरदम नारी पुरुष की अधीनता में रहती आई है। सामंति युग में पुरुष समाज ने स्त्रियों को लगभग उनके सारे

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 17
2. वही - पृ. 471

अधिकारों से वंचित कर दिया। उनकी स्वतंत्रता और सामाजिक आचरणों पर बंदिशें लगायी गयी। दरअसल स्थितियाँ इस तरह बदलीं कि सामाजिक जीवन में पुरुष के बिना 'नारी' का अस्तित्व नकारा जाने लगा। उसकी पहचान केवल किसी की पुत्री के रूप में या पत्नी अथवा माँ के रूप में होने लगी। पति सेवा, संतान को जन्म देना, गृहस्थि चलाना यही नारी का आदर्श कहकर संकुचित दायरे में बंद करने का प्रयास किया गया। अतः नारी घर के चार दीवारों में बंद रही परिणाम यह हुआ कि नारी जीवन रूढियों, परंपराओं, सांस्कृतिक मान्यताओं तथा रीति रिवाजों में जकड़े गये।

स्वातंत्र्योत्तर काल में देश की राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक परिस्थिति बदल गयी। इस मौके पर नारी को शिक्षा प्राप्त करने तथा आर्थिक दृष्टि से सक्षम बनने का अवसर मिला, लेकिन यह स्थिति नगरों की स्त्री तक ही सीमित रही। ग्रामीण जीवन में नारियों का स्थान ज्यादात्तर चुल्हा-चौका और पति-बच्चों की सेवा तक रहा है। ग्रामीण भारतीय स्त्रियों की दशा की ओर इशारा करते हुए आचार्य शिवपूजन सहाय लिखते हैं "ग्राम प्रधान देश भारत के गाँव की दशा शोचनीय होने से ही देश की दशा दयनीय हो गई है। गाँवों की दुर्दशा के कारणों में सबसे प्रधान है - ग्रामीण स्त्रियों की दुर्गति। यदि गाँवों में रहनेवाली हमारी माताएँ स्वस्थ, सुशिक्षित और स्वतंत्र हो तो उनकी संतानें कहलानेवाले हम भी वैसे ही होंगे।"[1] मार्कण्डेय ने जिस तरह से ग्रामीण नारी का बखान किया है, वह यथार्थ

---

1. संपा जगदीश्वर चतुर्वेदी, सुधा सिंह - स्त्री अस्मिता : साहित्य और विचारधारा - पृ. 70

प्रतीत होता है। उनके कथासाहित्य सामाजिक रूढ़ियों और अंतर्विरोध की शिकार ग्रामीण नारी के प्रति अपना सरोकारों का संकेत देता है।

2.7.1 कन्या जन्म से जुडी अभिशाप की धारणा

भारतीय समाज में बेटी का जन्म अभिशाप माना जाता है। गाँवों में नारी विषय यह धारणा ज्यादा दिखाई देती है। माँ-बाप बेटी का विवाह और दहेज आदि बातों को लेकर परेशान हो जाते हैं। गाँवों में जो औरत बेटी को जन्म देती हैं, उसे अभागिनी माना जाता है। घर में बेटी को पुत्र की बराबरी का प्यार और हक नहीं मिलता है। इस संदर्भ में 'अग्निबीज' उपन्यास की श्यामा का कथन समीचीन है - "कन्या के घर में जनमते ही कुल में खोट आती है। खुशी की जगह रंज मनाया जाता है। मैंने खुद देखा है कि गाती ब्राह्मणियाँ सिर झुका कर उठ जाती हैं। बूढ़ी दादियों के मुँह से कबर नीचे गिर जाता है। स्त्री हीन जात है।"[1]

'सोहगइला' कहानी की रनियाँ को बचपन में ही माँ के साथ ठाकुरानी के घर में काम करना पड़ता है। एक दिन किसी काम को टालने पर ठाकुरानी रनियाँ की माँ से उसकी शिकायत करती है। माँ पहले रनियाँ को चपत लगाती है, फिर वह कहती है - "सब की बात टालती रहती है। एक तो वैसे ही बिपत की मारी ठहरी, दूसरे ऊपर से तु करेजा खाती रहती है।"[2] इस से जाहिर होता है कि कन्या जन्म को समाज हेय दृष्टि से देखता है। मार्कण्डेय ने गाँव की इस असलियत को यथार्थ चित्रण किया है।

---

1. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 156
2. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ.

2.7.2 नारी : प्रेम, त्याग और करुणा का प्रतिरूप

भारतीय संस्कृति में नारी दया, प्रेम और त्याग तथा करुणा की प्रतीक मानी जाती है। दूसरों के सुख के लिए वह अपने सुख का त्याग करती है। सब कुछ सहने पर भी दूसरों के प्रति उसकी मन में प्रेम और करुणा होती है।

'भूदान' कहानी में मार्कण्डेय ने बनसती की कथा के जरिए स्त्री के त्याग का हूबहू वर्णन किया है। स्वतंत्रता के पहले अंग्रेज़ सरकार नील की खेती के लिए किसानों से भूमि लेती थी। अगर कोई भूमि देने के लिए राजी नहीं होता तो उसे हंटरों की मार खानी पड़ती थी तथा उसकी मौत हो जाती थी। चेलिक अपनी जमीन बचाना चाहता है। वह अपनी बूढी माँ को खेत में ले जाकर गला दबा देता है। अंग्रेज साहब पर माँ के खून का इल्ज़ाम लगाता है। विलायत में मुकदमा चला और साहब को सजा होती है। चेलिक अपनी ज़मीन बचा लेता है। "बात सच लगने लगी जो गाँव में आधे से ज़्यादा लोग आज भी कहते हैं, उसकी माँ ने ही कहा था कि तु मुझे ले चल कर मार दे, नहीं तो मैं सिर पटक कर यहीं जान दे दूँगी। तुझे फिर पकड़ कर ले जाएँगे, तुझे फिर मारेंगे, वे कसाई है चेलिका, कसाई और तु नहीं रहेगा तो...."[1]

'घुरा' कहानी में लंबरदार को बेटी की शादी के लिए रुपयों का प्रबंध करना एक जटिल समस्या बन जाती है। गाँव में कोई भी उसकी मदद नहीं करता

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 277

है। घूरा के पति भी नकारता हैं। घुरा का मन उसके प्रति तरस आता है। घुरा अपने पति से छिपाकर उसकी मदद करती है "आखिर रात को, करीब दो पहर रात गये पाँच सौ रुपये की गठरी आँचल में छिपा कर, घुरा आयी और बिना कुछ बोले लंबरदार के हाथों में थमा कर चली गयी।"[1] दूसरों के दुख में नारी का मन करुणा से उमड जाता है। लंबरदार बाद में रुपए वापस करने की बात से मुकर जाता है। पैसे को लेकर पति ने धूरा को बुरी तरह से पीटा। इन सब के बावजूद घुरा लंबरदार को कोसती नहीं है। वह इतना ही जवाब देती है - "यही तुम्हारा दीन-धरम कहता है न, बबुआ। जाओ समझ लूंगी लड़की के कन्यादान पर दे दिया, पर तुम्हारी नियत का फल भगवान तुम्हें जरूर देंगे।"[2] नारी में खुद कष्ट सहकर दूसरों की मदद करने की मानवीयता अंतरनिहित है।

'सात बच्चों की माँ' नारी मन के अमिट प्यार को दिखानेवाली कहानी है। गरीबी से संत्रस्त संतो का बाप उसकी शादि अधेड़ उम्र के लंगडे से करा देता है। तन और मन की भूख उसे अवैध संबन्धों के लिए मज़बूर कर देती है। इसी बीच संतो का परिचय देवीसिंह से होता है जिसे वह अपना मन और शरीर सौंपकर जी-जान से प्यार करने लगती है। परंतु देवीसिंह संतो को हमेशा शक की नज़रों से देखता है और बेहोश होने तक पीटता है। देवी सिंह कहता है - "वह करीब-करीब बेहोश थी। मेरे सिर का भूत भी उतर चुका था और आशंका से मैं भी काँप रहा था। लोगों ने लकडी से उसे खोदा खोदा, जैसे कोई जानवर को खोदता है, बच्चा।

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 35
2. वही - पृ. 36

और पूछने लगे कि किसने मारा.... पर उसने जो उतर दिया, उससे लोगों का दाँवा नहीं लगा। उसने कहा - मैंने अपने से गँडासा मारा है।"[1] इन सबके बावजूद देवीसिंह के प्रति संतो की प्यार में कमी नहीं होती है।

2.7.3 नारी और विवाह

भारतीय ग्राम जीवन में विवाह का सामाजिक स्तर पर ही नहीं बल्कि धार्मिक स्तर पर भी महत्व है। नारी पुरुष के यौन सम्बन्धों तथा सन्तानोत्पत्ति को सामाजिक मान्यता इस के जरिए प्राप्त होती है। "विवाह स्त्री पुरुष के बीच यौन संबन्ध, पारिवारिक मित्रता और पारिवारिक संस्थापना का सामाजिक समझौता है।"[2] विवाह के लिए नारी और पुरुष दोनों का होना ज़रूरी है। हाँलाकि पुरुष की अपेक्षा नारी के समक्ष विवाह को लेकर अनेक समस्याएँ आती हैं जिनका कारण समाज में उसकी दयनीय स्थिति है। मार्कण्डेय की दृष्टि में स्त्री पुरुष की प्रेरणा शक्ति है। 'उत्तराधिकार' कहानी में मार्कण्डेय ने शादी के बारे में अपना वक्तव्य यों अभिव्यक्त किया है - "स्त्री आदमी की काम करने की शक्ति को दूना कर देती है। शादी-ब्याह का मतलब मेरी समझ में सिर्फ इतना ही है।"[3]

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 74
2. Marriage may be defined as a contract in society between a man and woman normally intended to binding for life, for the purpose of sexual union. Mutual companionship and the establishment of a family - Bulletin of Christian Institute for the study of society - P. 37 (Sep. 1957)
3. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 304

अनेक तरह के शोषणों के बीच विवाह संस्था में स्त्री की आस्था कम दिखाई देती है। उसकी नज़र में शादी की अहमियत कम हो रही है। विवाह के नाम पर नारी के साथ छल किया जाता है। उस पर अन्याय, अत्याचार हो रहे हैं। 'बासवी की माँ' कहानी में शादी के संदर्भ में स्त्री की उदासीनता को यों उकेरा गया है - "उसका मन, उसका शरीर गुलामी की सांस्कारिक ज़जीर में कस कर, फँस गये हैं, और वह जी कर भी नहीं जीती। उसकी सेवा, श्रृंगार, शीलता सब झूठे दंभ हैं, जिनकी छाया में वह धूल-धूल कर मर रहा है, और विवाह....?' उसके चेहरे पर एक विकृति की रेखा आती है, जिसमें कई चीजें साफ साफ लिखी मिलती हैं।"[1] वाँसवी की माँ यानी मृणालिनी शादी के बाद घुटन भरी जिन्दगी जीने में विवश है। पति का व्यवहार उसे जड़वत बना देता है उसकी संवेदनशील मन को खत्म कर कुंठाओं से भर देता है। इस जिंदगी से ऊबकर वह आत्महत्या करती है।

गाँवों में शादी से जुडी अनेक कुप्रथाएँ प्रचलित है - जैसे बालविवाह, अनमेल विवाह तथा बहुविवाह। मार्कण्डेय की पैनी निगाहें इन तमाम समस्याओं को गहराई से देखने-परखने की कोशिश करती है।

2.7.3.1 बालविवाह

बाल विवाह गाँवों की एक विसंगति है। गाँवों में स्थित परंपरावादी और अशिक्षित लोगों के कारण आज भी कहीं कहीं बाल-विवाह की प्रथा दिखाई देती हैं। 'सोहगइला' की आठ वर्षीय रनिया बाल-विवाह की शिकार है। शादी उसके

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 11

लिए गुड़ा-गुडिया का खेल मात्र है। जब उसे पालकी में बिठाकर ससुरालवाले ले जाते समय रनियाँ "रो तो इसलिए पड़ी थी कि उसकी माँ रो रही थी। गाँव की सारी औरतें आँसु बहा रही थीं। वरना ऐसे रुलाई आती ही क्यों"[1] यह कितनी विसंगत बात है कि आज पालकी में बैठी इस छोटी सी दुलहन, कल तक गुड्डिडयों से खेलती थी। बाल विवाह को रोकने के लिए कानून बनाए जाने के बावजूद गाँवों में यह प्रचलित है।

2.7.3.2 अनमेल विवाह

अनमेल विवाह वैवाहिक जीवन की त्रासदी है। इस में पति-पत्नी की उम्र में काफी अंतर होता है। साथ ही उनकी रुचियों व विचारों में भी यह अनमेल देख सकते हैं। अनमेल विवाह का मूल कारण दहेज तथा आर्थिक पक्ष माना जा सकता है। मार्कण्डेय ने 'बिंदी' कहानी में अनमेल विवाह की समस्या को जद्दोजेहद से उकेरा है। जायदाद को हाथ में बनाए रखने के लिए बुआ बिंदी को विवाह के नाम पर बीमार और बूढ़े आदमी के साथ विदा कर देती है जिससे बिंदी का जीवन नरक तुल्य बन जाता है। अनमेल व्यवस्था पर मार्मिक व्यंग्य करते हुए लेखक लिखते हैं - "वह एक सच्ची और ईमानदार नारी बन गई थी। बिलकुल आत्महीन खोखली निष्क्रिय और प्रसाद स्वरूप अंधेरा, घुटन, खाँसी, कफ, उसे पति चरणों में जी भर कर मिले।"[2] शादी के बाद कुछ ही दिनों में बिन्दी विधवा हो जाती है।

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 194
2. वही - पृ. 284

'सात बच्चों की माँ' कहानी में सोलह वर्ष की सन्नो की शादी पचास वर्ष के लँगडे सरूप से की जाती है। "इब्राहिम का बाजा सोन्हु का सिंहा और चतुरी का डफला क्यों न बजता, पचास वर्ष के लँगडे सरूप के लिए षोड़शी कन्या जो आ रही थी।"[1] उस अपाहिज के घर में संतो की तन और पेट की भूख नहीं मिटती है। वहाँ से संतो के जीवन की त्रासदी शुरू होती है। तन और मन की भूख उसे अवैध संबन्धों के लिए मज़बूर कर देती है।

मार्कण्डेय ने बिंदी और संतो के जिन्दगी की त्रासदी को उजागर करते हुए अनमेल विवाह का विरोध ही नहीं उसकी अनैतिकता पर भी प्रश्न चिह्न लगाया है।

2.7.3 बहु-विवाह

बहु विवाह में पुरुष अनेक स्त्रियों से शादी करता है। फिर उन तमाम नारियों को भोग-विलास का साधन बनाते हैं। मार्कण्डेय ने 'उत्तराधिकारी' कहानी में गाँव में प्रचलित बहु-विवाह पर विचार-विमर्श किया है। जोगेश राव गाँव के विलासी और ऐयाशी ज़मीन्दार है। वह गाँव की भोली-भाली लड़कियों को केवल नाम के लिए शादी करके अपनी काम तृष्णा को बुझाता है। उसने अनेक विवाह किए है। जहाँ तक अपने नौजवान बेटे के उम्रवाली लड़की को भी पत्नी बनाया है। निशा, सरमा, राजो आदि इस बहु पत्नी प्रथा से शोषित है। मार्कण्डेय ने इस कहानी में बहुविवाह पर जमकर व्यंग्य किया है। वे लिखते हैं - "हमारे यहाँ ऐसे हर रोग

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 71

की दवा शादी है, क्योंकि वह एक पर्दा है, वह समाज, जो मूल्यहीन हो जाता है। सब कुछ छोड़ दे, उस पर्दों को नहीं छोड़ता, जिसमें वह अपनी गंदगी को छिपाये रखता है।"[1]

दरअसल आज शादी का महत्व तिरोहित होकर वह कई विकृतियों की ज़माअत हो गई है। विवाह का ऐसा स्वस्थ रूप दुर्लभ है जो व्यक्ति का जीवन में सुख-सन्तोष और विकास प्रदान करता है। शादी सचमुच नारी को शोषण करने का ज़रिया बन गया है।

2.7.4 नारी शोषण और प्रतिरोध

हमारे समाज में नारी शोषण की समस्या कोई नई बात नहीं है। सदियों से वह शोषित और पीडित रही हैं। देहातों में उसकी स्थिति और भी बदतर है। ग्रामीण नारी पीडा उपेक्षा और कई तरह के अत्याचारों से घिरी है। वह दोहरे शोषण की शिकार है। समाज की नज़रों में "स्त्री इस नीचे बहते हुए गंदे नाले के पानी से ज्यादा नहीं है।"[2] गाँवों में निरक्षर ही नहीं बल्कि पढ़ी-लिखी तथा नौकरी करनेवाली नारी की स्थिति भी संतोषजनक नहीं है। पुरुष वर्चस्ववादी समाज नारी की हैसियत को स्वीकार नहीं कर सकता है। 'अग्निबीज' का बाकर कहता है "तुम्हारा मतलब है कि लड़कियाँ चाकरी करती फिरें? बिना नौकरी की उनकी जिंदगी दूभर हो रही है। बडे-बडे की इज्जत धूल में मिली जा रही है। गुंड़े बदमाश उनकी जान ले रहे

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 299
2. वही - पृ. 11

हैं। नौकरी करेंगी, तो भला उनकी क्या इज्जत होगी। देखते नहीं, ब्लाक की दायी और नर्स को गाँव में लोग कैसी निगाह से देखते हैं।"[1] उपन्यास के कम्युनिस्ट नेता हरगोनसिंह कहते हैं कि "बिना बुनियादी परिवर्तन के इस निगाह को बदलना असंभव है। हमारा समाज जड़ हो गया है सिर्फ ऊपरी ढाँचे के बदलाव से कुछ नहीं हो सकता।"[2] मार्कण्डेय उन तमाम पुरुष प्रधान व्यवस्था को नारी शोषण की मूल वजह मानते हैं, जो नारी शोषण को प्रश्रय देते हैं।

ग्रामीण नारी दोहरे शोषण की शिकार है। एक और वह सगे-संबन्धियों से उपेक्षित और सतायी हुई है, तो दूसरी ओर सामंती समाज के अमानवीय मूल्यों से पीडित है।

2.7.4.1 सगे-संबन्धियों द्वारा शोषण

ग्रामीण परिवारों में स्त्रियों की दशा शोचनीय रही है। उस पर बंदिशें लगाती गयी कि वे पुरुष के खिलाफ कोई निर्णय न ले सकें। ज्यादात्तर ग्रामीण नारी अपनी जिंदगी तक का निर्णय नहीं ले पाती हैं। उनकी जिन्दगी में रक्षक ही भक्षक बन जाता है।

'बाँसवी की माँ' तथा 'सात बच्चों की माँ' कहानियों की नारियाँ अपने घर-परिवारवालों से ही शोषित और पीडित हैं। 'बाँसवी की माँ' करानी में मृणालिनी यानी बाँसवी की माँ पति द्वारा शोषित है। उसके पति को पुरुषों के प्रति आसक्ति

---

1. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 121
2. वही - पृ. 122

होने के कारण मृणालिनी का जीवन उपेक्षित रहा है। घुट-घुटकर वह अपने पति की इस कमजोरी को सहन करती रही है। एक पत्नी के नाते वह अपनी धर्म का निर्वाह करती रही लेकिन उसका पति कर्तव्यों से विमुख बना रहा। एक दिन वह अपने पुरुष साथी के साथ मृणालिनी का अपमान भी कर देता है। पुरुष साथी मृणालिनी का यौन शोषण करता है। इस घटना उसे एक जिंदा लाश बना देती है। "वह बड़ी भयानक रात थी बांसवी! ...सवेरे उठ कर जब तुम्हें लेने गयी, तो तुम्हारी माँ की हालत अजीब थी। दोनों घुटनों के बीच सिर गाडे, वे फफक-फफक कर रो रही थीं। जब मैंने बहुत जिद की तो उन्होंने सिर ऊपर करते हुए कहा, 'आरती का दीपक बुझ गया सीता! बुझ गया। गंगा का पानी इतना गंदला हो गया कि तुम उसे अब छू भी नहीं सकती। दूर हट जाओ। मेरी बच्ची को मुझसे दूर उठा ले जाओ!"[1] मृणालिनी का मन गहरे पापबोध से भर जाता है। वह आत्महत्या करती है। "'बाँसवी की माँ' भारतीय समाज में स्त्री की नियति को परिभाषित और अंकित करने की इच्छा का परिणाम है।"[2] 'सात बच्चों की माँ' कहानी में सोलह वर्ष की सन्नो की शादी पचास वर्ष के लँगडे सरूप से किया जाता है। गरीबी तथा रुपयों के लालच में संतो का बाप उसको बूढे के हाथ बेचकर मानों नरक में ही धकेल देता है। बाप को सरूप दस बिस्से खेत बेच कर उसका जेब भर देता है। "जब पान-सी पातर और फूल सी सुकुमार सन्नो ने डोले से पैर बाहर रखा, तो सारा गाँव सिकुड कर सन्न रह गया, जैसे सबको पाला मार गया हो या चोर को

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 15
2. मधुरेश - हिन्दी कहानी का विकास - पृ. 160-161

कहीं से चोरी के पापों का पता चल गया हो।" ...कन्या के साथ बड़ा अन्याय हुआ भाई। थोड़ा उमर-समो का ध्यान तो देना ही चाहिए।" आदि बातें चलने लगीं।"[1] बाप के किए का फल सन्नो को भुगतना पड़ता है। शादी के बाद सरूप के घर में उसकी तन और मन की भूख नहीं मिटती है। वह अवैध संबन्धों के लिए मज़बूर हो जाती है।

जब नारी खुद नारी की शोषक बन जाती है तो नारी मुक्ति की संभावना मिट जाती है। 'बिन्दी' कहानी की बिन्दी अपनी बुआ के शोषण का शिकार है। दादी की मृत्यु के बाद बिन्दी को अपने ही घर में नौकरानी बनकर रहना पड़ता है। बुआ पूरी जायदाद को अपनाना चाहती है। "बिन्दी घर की नौकरानी बनती गयी। कूटने-पीसने से लेकर बरतन माँजने और पानी भरने का सारा काम उसके सिर पर आ पड़ा। बात-बात में गालियाँ और फिर हाथ उठाने की नौबत भी आ गयी।"[2] बुआ उसपर कई तरह के अत्याचार करती है। शादी के नाम पर बीमार और बूढ़े आदमी से बिंदी का ब्याह करवाकर उसे नरक में ढकेल देती है।

नारी अपनों से होनेवाले अत्याचारों को अपनी नियति समझकर सह लेती है. इसके विरुद्ध वह आवाज़ नहीं बुलंद कर पाती है। सगे-संबन्धियों से होनेवाले शोषण चुप-चाप सहना उसकी मज़बूरी बन गयी है।

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 71
2. वही - पृ. 183

2.7.4.2 सामंतों द्वारा शोषण

ग्रामीण नारी घर के बाहर ठाकुर, ज़मींदार, साहुकार द्वारा शोषित रहती है। नारी की संपत्ति और शरीर पर इन लोगों की निगाह रहती है। नारी शोषण का कोई भी मौका को वे हाथ से जाने नहीं देते।

जमींदारों की बुरी नज़र नारी के सौंदर्य पर लगी रहती है। मौका पाकर उसकी इज्जत लूटा लेता है। अपनी कामवासना की पूर्ति के लिए उसके साथ मनमाना खिलवाड़ कर उसे बेइज्जत बनाया जाता है। ज़मींदारों के स्त्री नज़रिया के संबन्ध में 'उत्तराधिकार' कहानी के मंगल कहते हैं - "तुम लोगों के लिए औरत एक सामान की तरह है, और तुम्हारे ही लिए क्यों, सडे-गले पुराने संस्कारों की बेड़ी में कसे उन सारे कमज़ोर लोगों के लिए, जो चाहे मूर्ख हो, चाहे पढ़े लिखे।"[1] प्रस्तुत कहानी का जमीन्दार जोगेश ठाकुर की नजर में नारी हमेशा एक मज़ाक रही है। करमाआजी, धुन्नीभउजी, राजोबहु, निशा जैसी अनेक औरतों को जोगेश सिंह अपनी काम वासना का शिकार बनाते हैं। जोगेश सिंह की पहली पत्नी यानी बडी अम्मा राजु पहलवान से शारीरिक संबन्ध रखती है। इसे अपने पति की एयाशी का विद्रोह भी माना जा सकता है। निशा यानी छोटी अम्मा अपनी जिन्दगी के लिए ठोस कदम उठाती है। वह राजमहल से भागकर अपने प्रेमी मंगल के साथ शादी करती है। अध्यापिका का काम अपनाकर आगे की जिंदगी को सुरक्षित बनाती है।

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 302

'अग्निबीज' उपन्यास की हिरनी सामंती व्यवस्था की शिकार बन जाती है। विंदेश्वरी पाडे का बेटा बड़कु हिरनी को अपने जाल में फँसाकर उसका यौन शोषण करता है। "फिर कैसे क्या हुआ, कौन जाने। हिरनी का अमृत जैसा जीवन जहर हो गया। गाँव में काना-फूँसी होने लगी। माँ ने हिरनी से पूछा, तो हिरनी ने बड़कू का नाम बता दिया।"[1] कुआरी हिरनी गर्भवती बन जाती है। अपनी इज्जत बचाने के लिए बड़कु उसकी हत्या करता है।

बलात्कार के बाद नारी की मानसिक तथा सामाजिक स्थिति को इतना आघात लगता है कि वह खुद को इस संसार में जीवित रहने योग्य नहीं मानती है। वह जिंदा लाश बन जाती है। यौन शोषण के बाद नारी जीवन बर्बाद हो जाता है। काम विवश पुरुष के सामने ना ही स्त्री की आयु का बन्धन है और ना ही सौन्दर्या का मानदण्ड तथा जाति-धर्म की सीमा है।

गाँवों में पति के बिना पत्नी की कोई सामाजिक हैसियत नहीं होती है। विधवा बनना स्त्री जीवन की अजीब विडंबना है। पति की मौत के बाद वह अकेली बन जाती है। पूरा समाज उसके विमुख हो जाता है। उसे वह तरह-तरह से परेशान करने की कोशिश करता है। खासकर सामंतवादी समाज की नज़र उसपर रहती है। मार्कण्डेय की कहानियों में सामंतवादी समाज से संत्रस्त विधवा जीवन को गंभीरतापूर्वक उठाया गया है। 'कल्यानमन' की मंगी', 'महुआ के पेड' की दुखना और 'सवरइया' की महाराजिन तीनों विधवाएँ हैं, जो सामंतों के शोषण की शिकार हैं।

---

1. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 108

'कल्यानमन' कहानी में गाँव के ठाकुर द्वारा शोषित विधवा मंगी की असुरक्षित मानसिकता को उजागर किया गया है। कल्यानमन नामक पोखरी मंगी की जिंदगी का एकमात्र आश्रय है। सालों से उस पोखरी पर गाँव के ठाकुर की नज़र है। वह उस पोखरी को हथियाने के लिए कई चाल अपनाता है। मंगी को रुपये देने का लालच दिखाता है। यहाँ तक कि पटवारी से कहता है कि "तुम मंगी का नाम कल्यानमन वाले खेत से काट कर अपना नाम चढ़ा लो। मैं आधा तुम्हें ही दे दूँगा।"[1] लेकिन मंगी के प्रतिरोध के सामने ठाकुर की चाल असफल रहती है। आखिर ठाकुर मंगी का बेटा पनारु को मंगी के विरोध में बहकाता है। मंगी को भीतर से तोड़ देती है। ठाकुर को पोखरी देने के लिए वह मज़बूर हो जाती है।

'महुए का पेड़' में दुखने के पति के मृत्यु के तुरंत ही ठाकुर उस पर अत्याचार करने लगता है। पति के मरने के बाद वह उसे घर से बेदखल करवाता है। "अन्त में वह हमीशा के लिए चल बसा और दूसरे दिन ही ठाकुर ने बेदखली का हुकुमनामा भेज दिया।"[2] आखिरकार उसके पास एक छोटी सी झोपड़ी और महुए का पेड़ ही रह जाता है। ठाकुर उस पेड़ को भी हडपना चाहता है। उसकी गैर मौजुदगी में ठाकुर पेट कटवा लेता है। पेड़ गिरकर दुखना की झोपड़ी भी ध्वस्त होती है। वह जडवत हो जाती है। कहानी के अंत में दुखना की तीर्थयात्रा पर निकलने के पीछे यह संकेत निहित है कि दुखना जैसी असहाय विधवा के लिए इनसाफ की कोई गुंजाइश नहीं है। श्रीपतराय के शब्दों में - "दुखना के चरित्र के

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 187
2. वही - पृ. 133

अंदर से जैसे हमारी समस्त त्रस्त एवं पददलित नारी जाति का स्वर मुखरित हो उठा है। उसकी याद बडी देर तक इन पर छायी रहती।"[1] 'सवरइया' की महाराजिन भी दुखना की तरह ही शोषित है। उसके पति के मरने के बाद उसे जगह-जमीन से महरूम करके अलग कर दिया जाता है। उसकी आखिरी संपत्ती, सवरइया नामक गाय को भी ठाकुर उनसे छीन लेता है। सामंती व्यवस्था में नारी पग-पग पर शोषण की शिकार बनती है।

मार्कण्डेय की ज्यादात्तर कहानियों में नारी जीवन शोषित है। 'कल्यानमन' की मंगी, 'घुरा' की घुरा, 'सवरइया' की महाराजिन, 'सात बच्चों की माँ की' संतो, 'माई' की माँ, 'बिंदी' की बिंदी आदि सब शोषित है। ये तमाम नारियाँ भिन्न-भिन्न वर्गों से है, हाँलाकि शोषण और अन्याय के स्तर पर समान हैं।

2.8 हाशियेकृत लोगों की समस्या एवं प्रतिरोध

भारतीय समाज की संरचना और उसके विकास की प्रक्रिया से दूर मुख्यधारा के भीतर और बाहर कुछ ऐसे लोग, समूह और समाज हैं, जो सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं आर्थिक कारणों से हाशिये पर चल गये हैं। "विकसित और शक्तिशाली समाजों की यह कोशिश रहती है कि हाशिये के समाजों को विकास का भार ढोने के लिए जोता जाए और इनके परिश्रम के बल पर ही मुख्यधारा का निर्माण किया जाए।"[2] भारतीय समाज में दलित, आदिवासी, नौकर, किसान, मज़दूर आदि के साथ यही हुआ है। मार्कण्डेय हाशियेकृत लोगों के पक्षधर

---

1. कल्पना - अगस्त 1955 - पृ. 91
2. हंस - फरवरी 1992 - पृ. 32-33

है। उनके साहित्य किनारा कर दिए गए इन लोगों के जीवन को स्वस्थ बनाने का बीडा उठाते हैं।

2.8.1 दलित

गाँवों में आज़ादी के बाद भी उच्चवर्ग के अत्याचारों से दलितों की मुक्ति नहीं हो पायी है। बच्चों से लेकर बूढों तक सामंतों के खेत में काम करना पड़ता है। दलितों की विडम्बना यह है कि वे अपनी मर्जी से काम नहीं चुन पाते हैं। "गाँव में हर हरिजन का एक ठाकुर या ब्राह्मण होता है अथवा यह कहें कि हर ठाकुर या ब्राह्मण का अपना पैनी होता है। यह रिश्ता पारम्परिक रूप से चलता रहता है। वही हरिजन ठाकुर का हल चलाता है। कोई दूसरा आदमी उसे या उसके परिवार को अपने काम के लिए नहीं पकड़ता। कभी गलती से अगर किसी ने दूसरे के हलवाहे के साथ जोर-जबरदस्ती की, तो अक्सर बात बढ़ जाती है।"[1] सब कुछ सहकर अपने मालिक के यहाँ चुपचाप रहना उसकी नियती बन जाती है।

समाज में दलितों की कोई हैसियत नहीं है। उन्हें हर जगह अपमानित होना पड़ता है। उनके साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता है। 'अग्निबीज' के सागर कहता है - "तुम दोनों सब कुछ जानते हो कि मुझे मामूली कीडे-मकौडे से भी गया-बीता जीवन मिला है। धूल में सना हुआ, पद-दलित, नीचे, उपेक्षित, कुत्ते से भी बदतर, हर जगह से दूरदुराया हुआ और अपमानित।"[2] दलितों के नसीब में मान-सम्मान की जिन्दगी ही नहीं रही है।

---

1. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 36
2. वही - पृ. 162

दलितों के घर गरीबी, भूख और अभाव से ग्रस्त है। दो जून चुल्हा बहुत कम लोगों के घर में जलता है। 'अग्निबीज' उपन्यास के मुसई महतो के घर की हालत भी इससे भिन्न नहीं है - "गिनती की रोटियाँ जो जिसके हिस्से में पडतीं, एक ही बार में मिल जाती थीं। दो लिट्टियों का पिसान होता तो चार में से हर को आधी ही खाकर पानी पी लेना, एक नियम सा बन गया था।"[1]

उच्चवर्ग दलितों को अपने अधिकारों से वंचित रखने का भरपूर प्रयास करता है। दलित बच्चों की पढ़ायी पर बंदिशे लगाई जाती है। 'सुबह से शाम तक दलितों का पूरा परिवार भूपतियों के दरवाजों पर खटने के लिए बाध्य है। "अपने बच्चों को स्कूल भेजने पर उनकी पिटाई इसलिए की जाती है कि सारे हरिजन बच्चे स्कूल चले जाएँगे, तो मलिकों के जानवर कौन चरायेगा।"[2] स्कूल से दलित बच्चों को घसीटकर ले जाते हैं।

एक चमार के अध्यापक बनने से गाँव में कोहराम मच जाता है। "पत्थर की लीक हुई मानसिकता पर चौथी राम के अध्यापक होना मर्मान्तक आघात पहूँचाया था। अपनी नगंई और कठहुज्जती के लिए मशहूर रगुवर पण्डित का कहना था कि 'लुटिया ही डूब गयी गाँव के ब्राह्मण-ठाकुरों की, ईश्वर का कोप होगा। महामारी और नाती-पनाती संकर बरन हो जायेंगे। इसी को कलिकाल कहते हैं। अब चमार वेद बाँचेगे और बच्चों का विध्यारम्भ करेंगे।"[3]

---

1. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 31
2. वही - पृ. 10
3. मार्कण्डेय - हलयोग - पृ. 13

गाँवों में दलितों की बहु-बेटियों की कोई इज्जत नहीं होती है। सवर्ण उसके साथ मनमाना व्यवहार करते हैं। उनकी इज्जत के साथ खिलवाड करते हैं। दलितों पर होनेवाले अत्याचारों की पूछताछ करने के लिए कोई नहीं है, जहाँ तक दलित भी चुप रहते हैं। यह असलियत शोषकों का धीरज बन जाता है। 'अग्नीबीज' के बड़कू की सोच इससे भिन्न नहीं है। बडकु हिरनी का यौन शोषण करता है। गर्भवती बनने पर उसे कुएँ में ढकेल कर जान से मार देता है। बड़कु का कोई भी कुछ नहीं बिगाड़ सकता है। दलित अभिशप्त जीवन जीने के लिए मज़बूर हैं।

मार्कण्डेय के साहित्य में दलित सब कुछ समझते हुए भी शोषण की चक्की में पिस रहे हैं। दरअसल उनमें यह साहस नहीं कि वे इसके खिलाफ संगठित होकर खडे हो सकें। इस शोषण की गिरफ्त में मर मिटने के अलावा उनके पास और कोई रास्ता नहीं है। यह मार्कण्डेय के समय का सच है।

2.8.2 किसान

मार्कण्डेय की रचनाओं में किसान की ही तादाद ज्यादा है। उनकी 'कल्यानमन', 'भूदान', 'दाना भूँसा', 'दौने की पत्तियाँ' आदि कहानियों तथा 'अग्निबीज' उपन्यास में वे इन्हीं की हिमायत करते नज़र आते हैं। उनकी कहानियों में स्वातंत्र्योत्तर कृषक जीवन का सही एवं वास्तविक अंकन हुआ है। डॉ. नामवर सिंह के शब्दों में "मार्कण्डेय के किसान चरित्र जीवन की जिन स्थितियों के संदर्भ में चित्रित हुए हैं, वे आधुनिक भूमि सुधारों और विकास योजनाओं से सम्बद्ध हैं

और इनकी भूमि समस्यायें नयी जीवन की व्यवस्था तथा मानसिक अवस्था को व्यंजित करती है।"[1]

किसी भी किसान समस्या को भूमि से भिन्न रखकर नहीं देखा जा सकता है। जाहिर है कि असंतुलित भू वितरण ही इन सबकी धुरी है। स्वातंत्र्योत्तर देश की सत्ता के सूत्र पूंजीवादी ताकतों के हाथ जाने के कारण असमान भूमि वितरण की समस्या ज्यादा भयावह बनती गई, जिससे किसान की अभावमय जिन्दगी और विकराल बन गई है। मार्कण्डेय की 'कल्यानमन' और 'भूदान' कहानियाँ इस संदर्भ में खास महत्व रखती हैं। इन कहानियों की रचना उस समय हुई थी जब भूमि सुधार योजना की बात हो रही थी। कानून के तहत ज़मीन किसान के नाम सिकमी ज़रूर लग गयी, लेकिन ज़मीन्दारों से तंग होकर किसानों ने कागज़ पर दस्तखत देकर अपनी जान बचाना ही मुनासिब समझा था। 'भूदान' कहानी में रामजतन के नाम पर हलवाही की भूमि लग गयी है। ठाकुर उस ज़मीन को हथियाना चाहता है। उस ने रामजतन को धमकाया तथा 'भूदान पद्धति' से भूमि दिलाने का लालच दिया है। ऐसे वह भूमि हड़प लेता है। ठाकुर जानता है कि किसान के पास उनसे मुकदमा लड़ने का सामर्थ नहीं है। इसलिए ठाकुर के कहने पर किसान को अपनी ज़मीन छोडनी पड़ती है। कहानी में रामजतन अपनी हालत का बयान यों करता है - "हाँ दादा, ठाकुर ने दस बिगहा भूँयदान में दिया है। कहने लगे, 'क्यों मुझसे रार मोल लेते हो, आखिर में मुकदमा लड़ा कर परेशान कर दूँगा और तुम्हें मेरे खेत

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 61

की सिकमी से हाथ खींचना पड़ा जाएगा। चुपचाप स्टीपा दे दो, में तुम्हें पाँच बिगहे भूदान से दिला दूँगा। 'मुझे बात अच्छी लगी दादा और जानते हो मेरे पास उनसे मुकदमा लड़ने की सामरथ नहीं है।"[1] ठाकुर की बात मानकर रामजतन अपने नाम पर लगी भूमि ठाकुर को वापस देने के लिए विवश बन जाता है। 'कल्यानमन' की मंगी के हाथ से भी सिंधाडे की खेती छीन ली जाती है। मंगी कहती है कि "भला बची है एक बिस्सा भूँय किसी मजूर-धतूर के पास? सभी तो खेत जोत रहे थे। कोई मार खा कर इस्टीपा लिख गया, तो किसी को बहका कर सादे कागद पर अँगूठे की टीप ले ली, इन लोगों ने किसी को सौ-दो सौ दे कर सादे कागद पर अँगूठे की टीप ले ली, इन लोगों ने। किसी को सौ-दो-सौ देकर टरकाया। कहीं रह गया है कुछ।"[1] ज़मीन के बगैर किसानों को ऐसा लगता है कि अब इनके जीवन में कुछ बचा ही नहीं है। वे हताश और निराश हो जाते हैं।

'अग्निबीज' का बाकर की ज़मीन भी ठाकुर उनसे छीन लेता है। "वही क्यों, कितने ऐसे गरीब किसान जो ज़मींदारों को धरती के बदले धन नहीं दे सके, रुपया देनेवाले पट्टेदारों द्वारा अपनी पुश्तैनी जोतों से खदेड़ दिए गए। इस प्रकार भूमिहीन, भूमिहीन ही रह गया और पूँजीपति अपनी पूँजी और बढ़ाते गए।

'बीच के लोग' का युवा मनरा किसानों पर होनेवाले अत्याचारों के विरुद्ध संघर्षरत है। अपने रास्ते में रोक लगानेवालों को वह चेतावनी देता है - "जरूरत

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 276
2. वही - पृ. 192

तो ऐसी ही है। अच्छा हो कि दुनिया को जस की तस बनाये रखनेवाले लोग अगर हमारा साथ नहीं दे सकते तो बीच से हट जाएँ, नहीं तो सबसे पहले उन्हीं को हटाना होगा, क्योंकि जिस बदलाव के लिए हम रण रोपे हुए हैं वे उसी को रोके रखना चाहते हैं।"[1] मार्कण्डेय की किसान चेतना काबिले तारीफ है।

2.8.3 नौकर

नौकर अपना सब कुछ भूलकर दिन-रात मालिक की सेवा करते हैं। इस बीच उन्हें बहुत कुछ सहना पड़ता है। उसकी छोटी सी गलती पर भी उन्हें मार-पीट मिलती हैं। 'मुंशीजी' कहानी में नौकर के बेहाल को बखुबी से उकेरा गया है। नाथु बचपन से मुंशीजी के घर का नौकर रहा है। "एक दिन कुर्ता पहना रहा था। कपडा झाड़ना भूल गया और मुंशी को एक बरै ने काट लिया। बडे मुंशी के कोप को कौन कहे? सारे गाँव में सनसनी फैल गयी। क्या सजा मिलेगी बेचारु को....? अंत में उसे एक बरै के छते के नीचे खड़ा कराया गया और ऊपर का छता बड़ी लग्गी से खोद दिया गया। फिर क्या... था...? वह बहुत छटपटाया, बहुत चिल्लाया पर भागता कैसे? हाथ-पैर तो बाँधे थे।"[2] मालिक को इन लोगों से कोई हमदर्दी नहीं होती है। मुंशीजी घर की नौकरानी पर बलात्कार करने की कोशिश करता है। "उसने उँगली से मुझे बैठने का इशारा किया। मैं नहीं बैठी, तो एक-एक मुझे पकड़ कर खींचा। में चारपाई पर गिर पडी,... मैं डर कर पीछे हट गयी थी और भागना

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 415
2. वही - पृ. 65

चाहती थी, पर वह दरवाजे पर खड़ा था।"[1] घरेलू नौकरानियों के लिए यह एक ऐसी स्थिति है, जिससे बचना नामुमकिन होता है। नौकरानियों के मान-सम्मान पर मालिक खिलवाड करता है। वे इमानदारी से काम करके इज्जत से जीना चाहती है। 'कल्यानमन' कहानी की मंगी ठाकुर के घर में काम करती है। वह अपनी इज्जत के प्रति सजग है। कोई उस पर अपना रोब नहीं जमा सकता। जब कभी मालिक मंगी पर बिगडते, "तो जितना मालिक बोलते, उसका दूना बोलती, मंगी। मजाल जो जबान बन्द हो।...मंगी को क्या डर ! कहती, "कोई सेंत का खाती हूँ जो लात गारी सहूँ। रात-दिन छाती पर बज्जर जैसा गगरा-बाल्टी ढोती हूँ। बन्न कर दूँ तो सरने लगें रानी लोग। का हमरी देहियाँ माटी की है। का हमके देखे वाले की आँखिया गुमची की है। हमहूँ हाथ-पाँव में मेहंदी रचाय के बैठ सकती हैं।"[2]

'बादलों का टुकड़ा' कहानी की जसमा ठाकुर के कर्ज के बदले उसके घर में काम करती है। उसका घर गरीबी और अभाव से ग्रस्त है। एक दिन महाजन का कारिंदा आकर कर्ज के बदले में जसमा की बकरी माँगता है - "वह गुस्से में बोली, 'खोल लो और ले जाओ। मरेंगे, जिएँगे लेकिन यह करज का खटका तो छूटा। न मजूरी न धतूरी, जब देखो दरवाजे पर ठढक्कर की तरह खडे हैं कि यह कर दो, वह कर दो। दिन-दिन भर खटो और सरबउला एक रोश गुर-पानी तक को नहीं पूछता...। आज से हुई उस कलमूँह से।"[3] जसमा के कथनों से नौकरों की बदहालत जाहिर हो जाती है।

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 66
2. वही - पृ. 188
3. वही - पृ. 165

कुछ नौकर ऐसे भी है जो मालिक के अत्याचारों को नियती मानकर उसे ईश्वर मानते है। 'हरामी के बच्चे' कहानी में जगेसर मालिक की सेवा अपना धर्म मानते हैं - "मालिक की सेवा हमारा धर्म है। उनके जूती के तरे ही हमारी मुक्ति है। चाहे जो करें, चाहे.."[1] यह कहानी गाँव के ऐसे दबे-पिछड़े लोगों की कहानी है जो परंपरागत संस्कारों से जकडे हुए हैं। इन लोगों का अपना कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है, जो अपने मालिक की इच्छा को ही सबकुछ मानते हैं। कहानी में जगेसर की बेटी सत्ती पर अत्याचार करनेवाले मालिक की हत्या उसका नौकर करता है। दरअसल यह नौकरों में उभर आनेवाली नई चेतना का परिणाम है।

2.8.4 मज़दूर

भारतीय ग्रामीण समाज की मुख्यधारा के अंदर जो समूह हाशिये की जिंदगी व्यतीत कर रहे हैं, उसमें मज़दूरों की हालत सर्वाधिक दयनीय है।

मार्कण्डेय ने 'चाँद का टुकडा' कहानी में मज़दूरों के प्रति समाज की अमानवीय रवैया को दर्शाया है - सनोहर देहात के इलाके में बननेवाली सड़क पर मज़दूरी करने के लिए आता है। काम पर आते समय इन मज़दूरों के पास पैसा नहीं होता है। गाँव की सहुअइनियाँ इन मज़दूरों को उधार में दाल-पिसान नहीं देती है। "सहुअइनियाँ ने पिसान-दाल तौल कर, एक-एक को दिया और सब अपने अपने गमछे में बाँध कर उठ खडे हुए। एक ने पोली दुउभी दी तो काफी देर बक-झक हुई

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 165

और उसे अपने गमछे का आटा तराजु में गिरा देना पड़ा। एक ने पैसा नहीं दिया, तो उसे तब तक के लिए, जब तक वह पैसा न दे, अपनी धोती दरनी पडी। सनोहर ने सुना, सहुअइनियाँ चिल्लाकर कह रही थी, "का ठिकाना तुम्हार लोग का, आज इहाँ, कल उहाँ।"[1] सनोहर भूखे पेट काम पर जाता है। चार दिन काम चलता रहता है। एक रात जोर का पानी बरसने से कुछ दिनों के लिए काम बंद हो जाता है। काम बंद हो जाने पर मज़दूर घर चले जाते हैं, जो बचे थे उन्होंने ठेकेदार से कहा - "साहब, सनोहर भूखें मर रहा है, उसकी चार दिन की मजूरी....।" हफता पूरा भी नहीं हुआ। ठेकेदार बिगड़ कर बोला। साहेब हम कमकर है, बिना खाए दिन भर फावडा चलाएँगे तो कैसे जान बचेगी?"[2] हफ्ता पूरा न होने की बात कहकर ठेकेदार मजूरी देने से इन्कार कर देता है। मज़दूरों पर होती अमानवीय और शोषण वृत्ति का पर्दाफाश इस कहानी में किया गया है।

'मधुपुर के सिवान का एक कोना' कहानी भी इस तथ्य को लेकर लिखी गयी है। कहानी में बचन, नरेश और मुन्नन ऐसे मज़दूर हैं जो ठाकुर के खेत में दिन-रात काम करते हैं। ठाकुर के तमाम अत्याचारों को सहकर भी वे पशुओं की भाँति उसकी सेवा में अपने जीवन को खपा रहे हैं। मुन्नन ठाकुर का बन्धुआ मज़दूर है, उसे बच्चपन से ठाकुर की बखरी का गुलाम बनना पड़ा था। तब से वह दिन-रात की मेहनत और ठाकुर की मार-पीट सह रहा है। "इतने पर भी जब कभी

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 224
2. वही - पृ. 227

अबस हो वह काम बन्द करके मलिक के दालान में कहीं एक ओर फटे कम्बल में सिकुड़ा पड़ रह जाता है, तो उन्हें बडा बूरा लगता है और दस-बीस गालियाँ उसे ज़रूर सुननी पड़ती हैं। उसका पूरा जीवन ही मालिक का है।"[1] मुन्नन के मुँह से विरोध का एक शब्द भी नहीं निकलता है। वह अपनी तरफदारी करनेवाले नरेश से इतना ही कह पाता है - "दादा, तुम जाओ, मैं मरूँ या जीऊँ तुम लोग क्यों टाँग अड़ाने आते हो?"[2]

मार्कण्डेय के कथा साहित्य में ज्यादातर हाशियेकृत लोग सब कुछ जानकर भी चुप रहते हैं। अभिशप्त जीवन अपनी नियती समझकर उसी में खपा रहता है। दरअसल यह मार्कण्डेय के समय का सच हो सकता है, फिर भी शोषण के खिलाफ संघर्ष के बजाय समझौतावादी स्थितियों का वर्णन कुछ खटकता है। ऐसे मौके पर कल्यानमन की मंगी तथा 'बीज के लोग' के मनरा का विद्रोह अंधेरे में जुगनु का प्रकाश जैसे लगता है।

निष्कर्ष

मार्कण्डेय के कथा साहित्य में सामाजिक जीवन से जुडी अनेक समस्याओं को पूरी जद्दोजेहद के साथ उकेरा गया है। व्यक्ति और समाज का संबन्ध, पारिवारिक जीवन की समस्याएँ, नारी समस्या, हाशियेकृत लोगों की समस्याएं आदि अनेक

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 425
2. वही - पृ. 428

मुद्दों को उन्होंने अपने समूचे कथा साहित्य के अन्तर्गत समेटने का प्रयास किया है। इन समस्याओं के प्रस्तुतीकरण एवं विश्लेषण में उनकी प्रगतिशील दृष्टि खास सक्रिय रही है। उनके कथा साहित्य इस तथ्य पर ज़ोर देते हैं कि मौजूदा समाजिक व्यवस्था ही आज की तमाम समस्याओं की जड़ है और यह संकेत भी देता है कि उसके बदलने से ही इनका हल हो जाएगा।